पंजीयन संख्या : 68939/98

ज्ञान तत्व

सत्यता एवं निष्पक्षता का निर्भीक पाक्षिक

JUN 2025
अंक - 12

474

सावधान! युग बदल रहा है। 3

"... 80 प्रतिशत मुसलमानों के विचार परिवर्तन की जरूरत है, जिससे वे कट्टरपंथी मुल्ला-मौलवियों के नियंत्रण से बाहर आ सकें। ... ... सभी मुसलमानों को गाली देने की प्रवृत्ति बहुत घातक है..."

युग परिवर्तन की आहट 4

आपातकाल की समीक्षा 10

प्रकाशन की तिथि - 30-06-2025 पोस्ट की तिथि - 16-07-2025

सिंहावलोकन

5 **नई समाज व्यवस्था**

8 **गांधी मार्ग**

9 **व्यक्ति समीक्षा**

9 **योग दिवस**

साथियों की कलम से -
12 **लोकतंत्र, सत्ता और साम्यवाद: भारत-अमेरिका की समान चुनौती...**
: ज्ञानेन्द्र आर्य

12 **ज़ूम चर्चा कार्यक्रम का सारांश**

13 **स्वराज यात्रा: समीक्षा**

14 **जीवन पथ (उपन्यास)**

पत्र व्यवहार का पता

बजरंग लाल अग्रवाल पोस्ट बाक्स 15, रायपुर (छ.ग.) 492021

website : margdarshak.info

प्रकाशक, संपादक व स्वामी - बजरंगलाल
9617079344
mail : Support@margdarshak.info

मुख्य कार्यालय-
ज्ञानयज्ञ परिवार आश्रम
रामानुजगंज छत्तीसगढ़ 497220
8318621282, 9630766001

लोक स्वराज अभियान
505 कृष्णा शिप्रा अजूरा अपार्टमेंट कौशांबी
गाजियाबाद 201012
9325683604, 9012432074

प्रधान संपादक
बजरंग लाल अग्रवाल
(बजरंग मुनि)

संपादक मण्डल
नरेन्द्र सिंह
विपिन तिवारी

सहयोगी संपादक
ज्ञानेन्द्र आर्य

सदस्यता नियमन
संजय गुप्ता 872669477
कुशल दुबे 7999934238

सज्जा
लाल बाबू रवि

वितरण एवं मुद्रण सहयोग
रबीन्द्र विश्वास

ज्ञान केन्द्र विचार, समन्वय और परिवर्तन के तीर्थ

सावधान! युग बदल रहा है।

बजरंग मुनि
प्रधान संपादक

भारतीय संस्कृति में चार युग माने गए हैं- सतयुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग। चारों युगों का चरित्र और पहचान अलग-अलग मानी जाती हैं। यदि आधुनिक युग से तुलना करें, तब भी चार संस्कृतियाँ अस्तित्व में हैं- (1) विचार प्रधान (2) शक्ति प्रधान (3) अर्थ प्रधान (4) उन्मुक्तता प्रधान। इन्हें ही भारत में क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र संस्कृति माना जाता है, जिससे हम वर्तमान में मार्गदर्शक, रक्षक, पालक और सेवक के नाम से संबोधित करते हैं। पहली संस्कृति हिन्दुत्व के साथ जोड़ी जाती है, तो दूसरी इस्लाम, तीसरी ईसाईयत और चौथी साम्यवाद। वर्तमान समय में हम चारों का अनुभव कर चुके हैं। यह कहना गलत है कि सृष्टि के प्रारंभ से लेकर अब तक संस्कृतियों का प्रभाव घटते-घटते पहली बार कलियुग के रूप में आया है। बल्कि यथार्थ यह है कि देवासुर संग्राम कई बार हुआ है और पृथ्वी पर कई बार संस्कृतियों का उतार-चढ़ाव होता रहा है।

बहुत प्राचीन समय में क्या व्यवस्था थी, यह ठीक-ठीक नहीं बताया जा सकता क्योंकि किंवदंती के अनुसार ही हम राम, कृष्ण, रावण, कंस का अस्तित्व स्वीकार करके अपनी धारणा को पुष्ट करते हैं, किन्तु बुद्ध महावीर के काल से लेकर स्वतंत्रता तक का इतिहास उपलब्ध है, जिस आधार पर कुछ पुष्ट धारणा बनाई जा सकती है। यद्यपि इस इतिहास में भी कितनी मिलावट है, कितना यथार्थ यह नहीं कहा जा सकता, किन्तु कुछ बातें यथार्थ के रूप में कहीं जा सकती हैं क्योंकि उनका प्रभाव आज तक दिखाई दे रहा है। स्वतंत्रता के बाद का सारा घटनाक्रम प्रत्यक्ष दिख रहा है और उसकी वास्तविक समीक्षा विश्वासपूर्वक की जा सकती है।

यदि हम स्वतंत्रता के बाद का इतिहास और वर्तमान स्थिति की तुलना करें, तो कुछ बातें विश्व से लेकर भारत में साफ देखी जा सकती हैं। भारत ने राजतंत्र, इस्लाम, अंग्रेज तथा साम्यवाद का पर्याप्त अनुभव किया है। स्वतंत्रता के बाद यद्यपि भारत में लोकतंत्र था, किन्तु वह लोकतंत्र पूरी तरह वामपंथ के प्रभाव में था, जो 91 के बाद बदलना शुरू हुआ। वर्तमान समय में साम्यवाद, वामपंथ अथवा समाजवाद इतिहास की वस्तु बन चुके हैं। अब यह विचारधारा लगभग समापन की ओर है। स्वतंत्रता के बाद भारत में इस्लाम भी लगातार विस्तार पाता रहा। यहाँ तक कि भारत में हिन्दुओं का तीन चौथाई बहुमत होते हुए भी हिन्दू मुसलमानों की तुलना में दूसरे दर्जे के नागरिक बनकर रहे। जनसंख्या और मनोबल के आधार पर भारत में मुसलमान सर्वाधिक शक्तिशाली रहे हैं। भारत में अव्यवस्था भी चरम तक बढ़ी और भ्रष्टाचार भी। नक्सलवाद और आतंकवाद भी लगातार बढ़ता गया। ऐसा लगा कि वास्तव में कलियुग अपने चरम पर है। हिन्दुत्व और इस्लाम की मान्यताओं में एक विशेष अंतर यह होता है कि इस्लाम धर्म को ही मानवता मानकर चलता है, जबकि हिन्दुत्व मानवता को ही धर्म मानता है। इस्लाम धर्म नहीं होता, बल्कि सिर्फ संगठन मात्र होता है, जबकि हिन्दुत्व संगठन बिल्कुल नहीं होता, सिर्फ धर्म होता है। इस्लाम में अंतिम सत्य खोजने पर पूरी तरह प्रतिबंध होता है, जबकि हिन्दुत्व अंतिम सत्य खोजने की पूरी स्वतंत्रता देता है। इस्लाम संगठन शक्ति को सहजीवन से अधिक महत्व देता है। इस्लाम न्याय की तुलना में अपनत्व को अधिक महत्वपूर्ण मानता है, जबकि हिन्दुत्व संगठन की तुलना में संस्था को अधिक महत्व देता है तथा अपनत्व की जगह भी न्याय महत्वपूर्ण मानता है। आज दुनिया इतनी आगे चली गई है, फिर भी यदि संगठित इस्लाम धार्मिक इस्लाम में आज तक नहीं बदला जा सका, तो यह कलियुग का प्रभाव ही माना जा सकता है।

पिछले कुछ वर्षो से ऐसा लग रहा है कि युग बदलने लगा है। चार लक्षण बिल्कुल स्पष्ट दिख रहे हैं-

1 साम्यवादी विचारधारा लगभग समाप्त हो रही है, इसलिए उस पर किसी प्रकार की चर्चा उचित नहीं है।

2 संघे शक्ति कलौयुगे अर्थात संगठन में ही शक्ति है की विचारधारा राडार पर है। सबसे पहले बुद्ध ने इस विचारधारा का प्रतिपादन किया था, किन्तु संगठन में ही शक्ति है, इस विचारधारा का सबसे अधिक लाभ इस्लाम ने उठाया। 1400 वर्षो तक इस्लाम इस विचारधारा को माध्यम बनाकर सारी दुनिया में छा गया। यहाँ तक कि स्वतंत्रता के पूर्व संघ परिवार ने भी हार थक कर इस्लाम की नकल की और संगठन बनाकर भारत में बड़ी सफलता प्राप्त की। किन्तु पिछले कुछ वर्षों से यह विचारधारा संकट में आ गई है। सारी दुनिया में इस्लाम अविश्वसनीय हो गया है। भारत में नरेन्द्र मोदी और अमेरिका में ट्रम्प की विजय में इस नफरत का बहुत बड़ा योगदान रहा है। इस्लाम सारी दुनिया को दारुल इस्लाम में बदलने के लिए प्रयत्नशील रहा है। किन्तु अब तो ऐसा दिखने लगा है कि या तो उसे दारुल अमन की ओर लौटना होगा, अन्यथा वह चौदहवीं सदी की कहावत के अनुसार समापन की ओर चला जायेगा। इजराइल या वर्मा हो अथवा कश्मीर ही क्यों न हो, कहीं भी इस्लामिक कट्टरवाद को अब समर्थन नहीं मिल रहा है। यहाँ तक कि अनेक मुस्लिम देश भी अब ऐसे आतंकवाद का विरोध करने लगे हैं। पाकिस्तान अलग थलग पड़ता जा रहा है। कश्मीर की स्थिति यह है कि कहीं लेने के देने न पड़ जाए । दुनिया के मुसलमानों को सहजीवन अपनाना ही होगा। यदि थोड़े दिनों के लिए भी संघ परिवार चुप हो जाये, तो इस्लाम की अक्ल ठिकाने आने में देर नहीं लगेगी और मोदी के आने के बाद यह संभव भी दिखता है। आजकल सुब्रमण्यम स्वामी, प्रज्ञा ठाकुर आदि भी कम बोलने लगे हैं। यह शुभ लक्षण है।

3 भारत में राजनीति का स्तर ठीक होने लगा है। सत्ता पक्ष में नरेन्द्र मोदी एक ध्रुव के रूप में स्थापित हो रहे हैं, तो विपक्ष में भी नीतिश कुमार लगातार लोकप्रियता की ओर बढ़ रहे हैं। अरविन्द केजरीवाल भी नीचे जा रहे हैं और भविष्य में ममता बनर्जी की भी यही संभावना दिखती है। नितीश कुमार तो सत्ता पक्ष में होते हुए भी विपक्ष की सफल भूमिका में हैं। इससे स्पष्ट है कि अब राजनीति में नैतिकता का ग्राफ ऊपर होगा। वर्तमान भारत में बड़े-बड़े राजनेता तथा सरकारी अफसर जिस तरह जेलों में जा रहे हैं, उसने भ्रष्टाचार पर भी अंकुश लगाने की शुरुआत कर दी है। मैं स्पष्ट हूँ कि भारत की राजनीति ठीक दिशा में जा रही है।

4 दुनिया में फेसबुक, वाट्सएप आदि का प्रचलन बहुत तेजी से बढ़ रहा है। यह प्रचलन विचार मंथन में सहायक हो रहा है। अब विचार प्रचार की संभावनाएँ घटनी शुरू हो गई हैं। यहाँ तक कि मीडिया का भी महत्व घट रहा है और फेसबुक आदि के माध्यम से प्रत्यक्ष विचार मंथन हो रहा है। यह भी एक शुभ लक्षण है।

युग परिवर्तन अपने आप नहीं होता है, बल्कि उसमें परिस्थिति अनुसार स्वयं को भी सक्रिय होना पड़ता है। साम्यवाद की चर्चा कम कर देनी चाहिए। इस्लाम पर विचार करते समय ध्यान रखना होगा कि दस प्रतिशत कट्टरवादी मुल्ला-मौलवी 80 प्रतिशत सामान्य मुसलमानों को अपने साथ जोड़े रखते हैं। जो दस प्रतिशत आधुनिक सोच के मुसलमान हैं, उन्हें ये 90 प्रतिशत एकजुट होकर अलग-थलग कर देते हैं। इन बीच वाले 80 प्रतिशत मुसलमानों के विचार परिवर्तन की जरूरत है, जिससे वे कट्टरपंथी मुल्ला-मौलवियों के नियंत्रण से बाहर आ सकें। यह कार्य संबंधों के आधार पर भी हो सकता है और विचारों के आधार पर भी। सभी मुसलमानों को गाली देने की प्रवृत्ति बहुत घातक है। जहां तक भारतीय राजनीति का संबंध है, तो नरेन्द्र मोदी और नीतिश कुमार की राजनीति बीच का पड़ाव मात्र है। आदर्श स्थिति नहीं। आदर्श स्थिति के लिए एक निष्पक्ष दलविहीन तीसरे पक्ष को सामने आना चाहिए, जो दलगत राजनीति से दूर रहकर जनमत पर मजबूत प्रभाव बना सके। सौभाग्य से "माँ" संस्थान इस दिशा में निरंतर सफलतापूर्वक बढ़ रहा है। वाट्सएप, फेसबुक, वेबसाइट आदि को माध्यम बनाकर स्वस्थ विचार मंथन को भी प्रोत्साहित करना चाहिए। इस दिशा में भी निरंतर प्रयास जारी है। मैं पूरी तरह आश्वस्त हूँ कि अब कलयुग का अंतिम चरण समाप्त होने तथा युग परिवर्तन के लक्षण सारी दुनिया में दिखने शुरू हो गए हैं। आवश्यकता यह है कि हम इस यज्ञ में अपनी आहुति कितनी और किस प्रकार दे सकते हैं, इसकी तैयारी करें।

प्रश्नोत्तर

प्रश्न- सुना गया है कि गांधी ने भी युग परिवर्तन के विषय में सोचा था और आचार्य श्री राम शर्मा जी ने तो युग परिवर्तन की घोषणा भी कर दी थी। आप बताइए की आपकी संभावनाएं उन दोनों से अलग कैसे हैं?

उत्तर- युग परिवर्तन के लिए राजनैतिक व्यवस्था और सामाजिक व्यवस्था दोनों पर एक साथ सोचना होगा। गांधी इस दिशा में ठीक सोच रहे थे लेकिन गांधी की अकाल मृत्यु के बाद पंडित नेहरू की धूर्तता और बिनोवा की शराफत के कारण गांधी की सोच आगे नहीं बढ़ सकी। श्री राम शर्मा की नीयत बहुत अच्छी थी लेकिन प्रयत्न अधूरा था। उन्होने सामाजिक व्यवस्था परिवर्तन को ही एकमात्र माध्यम बनाकर “हम बदलेंगे युग बदलेगा” का नारा दे दिया जिसका इस तरह घातक परिणाम हुआ जैसा बिनोवा की शराफत का हुआ। किंतु अब नए परिवर्तन दोनों दिशाओं में एक साथ हो रहे हैं। इसलिए सफलता की संभावना अधिक है।

सारी दुनिया में इस्लाम को उसके वास्तविक स्वरूप में पहचानने की शुरुआत हो गई है। अमेरिका में राष्ट्रपति ट्रम्प का अप्रत्याशित जीतना अथवा भारत में नरेन्द्र मोदी की अप्रत्याशित बढ़ती लोकप्रियता में इस्लाम के प्रति बढ़ते संदेह का बहुत बड़ा योगदान है। जिस तरह पाकिस्तान अलग-थलग होता जा रहा है, जिस तरह वर्मा में रोहिंग्या मुसलमान अकेले दिखने लगे हैं तथा उन्हें मानवता के नाम पर भी शरण नहीं मिल पा रही, जिस तरह सारी दुनिया में मानवता के नाम पर होने वाले मुसलमानों के साथ अच्छे व्यवहार का दृष्टिकोण बदलता जा रहा है, वह वास्तव में युग परिवर्तन का संकेत है। चौदह सौ वर्षों तक इस्लाम अपनी संगठन शक्ति के बल पर ही अपना विस्तार करता रहा। अब ऐसे लक्षण दिखने लगे हैं कि इस्लाम को या तो अपनी संगठनात्मक विचारधारा छोड़नी होगी अथवा अपने समापन की प्रतीक्षा करनी होगी। जिस तरह इस्लाम बढ़ता रहा, उस तरह अब दुनिया स्वीकार करने को तैयार नहीं दिखती। ये लक्षण सारी दुनिया में भी दिख रहे हैं और भारत में भी। भारत में भी कश्मीर में आतंकवाद आजकल कुछ शराफत की भाषा बोलना शुरू कर दिया है।

यदि भारत की समीक्षा करें तो सिर्फ इस्लाम ही नहीं बल्कि अन्य मामलों में भी युग परिवर्तन के संकेत दिखने लगे हैं। राजनीति में तीन अलग-अलग समूह स्पष्ट हैं। सत्ता पक्ष के रूप में नरेन्द्र मोदी का एक छत्र प्रभाव बढ़ रहा है, दूसरी ओर विपक्ष में भी अब नीतिश कुमार स्पष्ट आगे बढ़ रहे हैं तथा अन्य अनेक विपक्षी कहे जाने वाले नेताओं का प्रभाव घट रहा है। अरविंद केजरीवाल भी लगातार नीचे जा रहे हैं। ममता बनर्जी को भी दो-चार वर्षों में चुनौती मिलेगी ही। इस तरह राजनीति में साफ-सुथरी नीयत और नीति वालों का बढ़ता प्रभाव साफ दिख रहा है। व्यवस्था परिवर्तन अभियान के नाम से पक्ष विपक्ष के बीच एक निष्पक्ष प्रयास का निरंतर मजबूत होना भी युग परिवर्तन का संकेत दे रहा है।

आर्थिक नीतियाँ भी सारी दुनिया में बदल रही हैं। भारत ने भी आर्थिक नीतियों में सकारात्मक बदलाव की गति बहुत तेज कर दी है। समाज व्यवस्था भी ठीक दिशा में जाती दिख रही है। वर्ग संघर्ष घटकर आंशिक रूप से वर्ग समन्वय की तरफ बढ़ने के संकेत दिखने लगे हैं। संघ परिवार भी धीरे-धीरे सावरकरवादियों से दूरी बना रहा है। प्रवीण तोगड़िया, प्रज्ञा ठाकुर, ठाकरे परिवार या टी राजा सरीखे गोडसेवादियों को भी लगातार किनारे किया जा रहा है। पसमांदा मुसलमानों को भी धीरे-धीरे संघ के साथ जुड़ने के लिए प्रेरित किया जा रहा है। यह गति और अधिक तेज होगी, ऐसे लक्षण साफ दिखने लगे हैं।

फिर भी अभी कुछ कार्य भारत में युग परिवर्तन में बाधक हैं। भारत की न्यायपालिका अभी भी अपनी सर्वोच्चता सिद्ध करने पर अड़ी हुई है। अभी न्यायपालिका में जे एन यू संस्कृति का प्रभाव खत्म नहीं हुआ है। इसी तरह इस्लाम के संदेह के घेरे में आने से तथा नरेन्द्र मोदी के बढ़ते प्रभाव से साम्प्रदायिक हिन्दुत्व तथा संगठनवादी विचारधारा का मनोबल बढ़ने लगा है। युग परिवर्तन में इनका बढ़ता प्रभाव भी बाधक होगा क्योंकि संगठन शक्ति हमेशा सहजीवन में असंतुलन पैदा करती है। जिस तरह साम्यवाद अपने आप गया, इस्लाम अपने आप कट्टरवाद को छोड़ेगा, उसी तरह भारत की न्यायपालिका तथा संगठन प्रिय हिन्दुत्व को भी बदलना ही होगा।

मेरी अपने मित्रों को सलाह है कि वे किसी पक्ष विपक्ष में झुकने की अपेक्षा निष्पक्ष रहने और दिखने की आदत डालें। वे यदि सक्रिय होना चाहते हैं तो व्यवस्था परिवर्तन के प्रयासों से भी संपर्क करें। वे क्रिया के पूर्व विचार मंथन को अधिक महत्व दें। शराफत की जगह समझदारी को अधिक तेज गति से आगे बढ़ाएँ। साथ ही उन्हें यह भी ध्यान देना है कि वे मुसलमानों से किसी प्रकार की घृणा या भेदभाव न करें। क्योंकि मुसलमानों में भी दस प्रतिशत ही कट्टरवादी हैं और इन कट्टरवादियों के प्रभाव में शामिल 80 प्रतिशत मुसलमान समझाए जा सकते हैं। हमारा कर्तव्य है कि हम इन 80 प्रतिशत को 10 प्रतिशत उग्रवादियों से अलग थलग करने का प्रयास करें। दोष इस्लाम में नहीं बल्कि दोष उसके संगठनवादी चरित्र में है। युग परिवर्तन के लिए उस संगठनवादी चरित्र में बदलाव करना होगा।

अंत में मैं पूरी तरह आश्वस्त हूँ कि अब विश्व कलियुग से धीरे-धीरे सतयुग की ओर जाने की शुरुआत कर रहा है और हमारा कर्तव्य है कि हम इन प्रयासों में सहयोग और समर्थन करें।

युग परिवर्तन की आहट

दुनिया में युग परिवर्तन का क्या इतिहास रहा है, यह बात अब तक स्पष्ट नहीं है, किंतु समय-समय पर युग परिवर्तन होता रहा है, ऐसे लक्षण साफ दिखते हैं। कभी दुनिया बहुत अधिक विकसित थी और बाद में हमने बंदरों से शुरुआत की, यह बातें भी सुनाई देती हैं। देवासुर संग्राम या महाभारत की कहानी भी युग परिवर्तन की मान्यता के साथ जोड़ी जा सकती है। इस तरह की कहानी सिर्फ हिंदुओं में ही प्रचलित नहीं है, बल्कि ईसाइयों में भी बहुत मान्यता प्राप्त है। मैंने अपने जीवन के 85 वर्षों में भी ऐसे युग परिवर्तन का प्रत्यक्ष अनुभव किया है। उस कालखंड में हमें तकनीक का ज्ञान नहीं था। मोबाइल, इंटरनेट, कंप्यूटर की तो कोई कल्पना ही नहीं थी। चलने के लिए सड़क नहीं थी। प्रकाश के लिए बिजली भी नहीं थी। खाने और पहनने के लिए कपड़ों का भी बहुत अभाव था। कुछ संपन्न लोगों के लिए आवागमन के रूप में बैलगाड़ी का ही सहारा था, लेकिन दूसरी ओर, आम लोग न्यायालय में भी झूठ नहीं बोलते थे, सामाजिक और धार्मिक स्थान पर तो झूठ बोलने वालों की संख्या ही नगण्य होती थी। लोग घरों में ताले नहीं लगाते थे, छुआछूत बहुत अधिक होते हुए भी ऊंच-नीच की भावना कम थी। हिंदू-मुसलमान के बीच आपसी संबंध बहुत अच्छे थे। गरीब-अमीर के बीच भी मानवता के संबंध थे। आज बहुत तेज गति से भौतिक विकास होते हुए भी नैतिकता का बहुत तेजी से पतन हुआ है। भ्रष्टाचार, सांप्रदायिकता, जातीय कटुता, जालसाजी, धोखाधड़ी जैसी अनेक बुराइयों का विस्तार हुआ है। अब तो ऐसा दिखने लगा है कि देवासुर संग्राम नहीं, बल्कि राक्षसी प्रवृत्तियों के समक्ष दैवी प्रवृत्तियों का आत्मसमर्पण हो गया है। अब तो गांव-गांव में अपनी सुरक्षा के लिए गुंडा तत्व का सम्मान करने की मजबूरी भी पैदा हो गई है। इसलिए मेरे प्रत्यक्ष अनुभव के आधार पर यह कहा जा सकता है कि युग परिवर्तन सतयुग से चलकर कलयुग तक आ चुका है, लेकिन कुछ बदलाव के भी संकेत दिखने लगे हैं। दुनिया की आबादी तेज गति से बढ़ते-बढ़ते प्राकृतिक रूप से ठहराव तक आ गई है। अब आगे चलकर उसी गति से कम होने की भी संभावनाएं बनने लगी हैं। दैवीय प्रवृत्तियों और आसुरी प्रवृत्तियों के बीच टकराव के विषय में गंभीरता से सोचा जा रहा है। लोकतंत्र के विषय में सोचकर लोक स्वराज्य की भी रूपरेखा बनने लगी है। शराफत और धूर्तता के बीच समझदारी को विकसित करने की दिशा में भी सोचा जा रहा है। धर्म और राज्य की तुलना में लगातार गिरती जा रही समाज व्यवस्था को भी मजबूत करने के प्रयास हो रहे हैं, इसलिए हम यह कह सकते हैं कि जिस तरह रात के अंधेरे के बाद सूर्योदय की संभावना बनती है, 6 महीने में लगातार घटते हुए दिनों को प्राकृतिक रूप से 6 महीने बाद बढ़ने की शुरुआत होती है, इस तरह अब कलयुग का अंतिम चरण कमजोर होकर सतयुग के प्रथम चरण की शुरुआत की उम्मीद करनी चाहिए।

नयी समाज व्यवस्था :

1 आदर्श समाज व्यवस्था में प्रत्येक व्यक्ति को भयमुक्त होना चाहिए और प्रत्येक अपराधी को भयग्रस्त। यदि हम पूरे भारत का आकलन करें तो भारत में आमतौर पर कानून का पालन करने वाला प्रत्येक व्यक्ति भयभीत है और कानून को तोड़ने वाला अपराधी लगभग भयमुक्त है। जहां कानून का पालन करने वाले 90% व्यक्ति अनावश्यक कानूनों से भयभीत हैं, वहां अपराधियों में 90% लोग कमजोर कानूनों से भयमुक्त हैं। स्पष्ट है कि कहीं न कहीं हमारी व्यवस्था में दोष है। यदि व्यवस्था ठीक होती तो ऐसा नहीं होता। इस विषय में यदि गहराई से जांच की जाए तो हम पाते हैं कि सरकार ने कानून का पालन करने वालों के प्रति इतने अधिक कानून बना दिए हैं कि उन कानूनों का अक्षरशः पालन करना लगभग असंभव है। कोई भारत में एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं मिलेगा जो एक नंबर का हो; हर व्यक्ति कहीं न कहीं कानून तोड़ता ही है और इसलिए वह व्यक्तिहीन भावना से ग्रस्त हो जाता है। लेकिन भारत के 99% कानून इस प्रकार के बने हुए हैं कि अपराधियों को दंड आसानी से मिल ही नहीं सकता। हमारी न्यायिक प्रक्रिया और प्रशासनिक प्रक्रिया इतनी लंबी है, इतनी जटिल है कि अपराधियों में कानून का भय होता ही नहीं है। अपराधी अच्छी तरह कानून की जटिलता का लाभ उठाना जानता है और निरपराध अनावश्यक कानून से बचना भी नहीं जानते। इसलिए मैं यह कह सकता हूं कि वर्तमान राजनीतिक सामाजिक व्यवस्था में आमूलचूल बदलाव की जरूरत है। हर सामाजिक व्यक्ति को भयमुक्त होना और अपराधियों का अधिकतम भयभीत होना ही आदर्श समाज व्यवस्था कही जा सकती है, जो वर्तमान समय में उपलब्ध नहीं है।

2 नई समाज व्यवस्था में राष्ट्र और राज्य बिल्कुल अलग-अलग होंगे। राष्ट्र समाज का एक भाग होगा; समाज पूरे विश्व का एक होगा। राष्ट्र किसी भौगोलिक सीमा से घिरा हुआ भूभाग होगा। राष्ट्र अपनी सीमा के प्रत्येक नागरिक की व्यवस्था करेगा; राज्य प्रत्येक नागरिक को सुरक्षा देगा। राज्य की भूमिका व्यवस्थापक की न होकर शासक की होगी। राज्य राष्ट्र का मैनेजर होगा; राष्ट्र समाज का एक भाग होगा। राष्ट्र धर्म, समाज और राज्य तीनों की मदद से कार्य करेगा; राज्य न्यायपालिका, विधायिका और कार्यपालिका की मदद से कार्य करेगा। राष्ट्र के सहायक होंगे परिवार, गांव, जिला, प्रदेश और संघ; राज्य के सहायक होंगे सेना, पुलिस, वित्त, विदेश, न्याय। राष्ट्र एक संविधान बनाएगा; राज्य उस संविधान के आधार पर कार्य करेगा। राष्ट्र किसी भी व्यक्ति को सिर्फ बहिष्कृत कर सकता है, दंड नहीं दे सकता; राज्य किसी भी व्यक्ति को संविधान के अनुसार दंडित कर सकता है। राष्ट्र की भूमिका संविधान तक सीमित होगी और राज्य की भूमिका कानून तक सीमित होगी। कानून राज्य बनाएगा। राज्य प्रत्येक व्यक्ति को मौलिक और संवैधानिक अधिकारों की सुरक्षा की गारंटी देगा; राष्ट्र प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक अधिकारों की सुरक्षा की गारंटी देगा। इस तरह हम राष्ट्र और राज्य को अलग-अलग देख रहे हैं; इस विषय पर हम चर्चा को आप लोगों के साथ मिलकर और आगे बढ़ाना चाहते हैं।

3 दुनिया में युद्ध की बढ़ती संभावना को देखते हुए एक नई संयुक्त राष्ट्र संघ व्यवस्था की गंभीर आवश्यकता है। युद्ध मानवता के लिए किसी भी परिस्थिति में घातक होता है लेकिन युद्ध और शांति के बीच किसी एक का चयन करना भी कठिन होता है इसलिए युद्ध को कभी-कभी ताकत के बल से ही रोका जा सकता है और ऐसी शक्ति संयुक्त राष्ट्र में आनी चाहिए। विश्व युद्ध के बाद हमने इसी कल्पना पर संयुक्त राष्ट्र संघ बनाया संयुक्त राष्ट्र संघ युद्ध को रोकने में आंशिक रूप से तो सफल रहा किंतु यह अंतिम समाधान नहीं दे सका। आज भी विश्व युद्ध की संभावनाएं इसी तरह बनी हुई है। स्पष्ट है कि हमें वर्तमान संयुक्त राष्ट्र प्रणाली की तुलना में कोई एक और अधिक अच्छी प्रणाली विकसित करनी चाहिए । इस संबंध में मैंने एक सुझाव दिया था कि एक विश्व संविधान बनना चाहिए जो राष्ट्रों के बीच नहीं बल्कि दुनिया के सभी नागरिकों के बीच होना चाहिए। इस संविधान की प्रारूप समिति के लिए पूरी दुनिया के 750 व्यक्तियों का चयन करना चाहिए अर्थात प्रत्येक एक करोड़ की आबादी पर एक व्यक्ति इस प्रारूप समिति में शामिल हो । यह 7: सौ लोग मिलकर एक विश्व संविधान का प्रारूप बनावें और यह प्रारूप मतदान के लिए रखा जाए। मतदान के बाद उस प्रारूप को विश्व संविधान मान लिया जाए। इस तरह एक विश्व संविधान और विश्व संविधान के अनुसारसंयुक्त विश्व व्यवस्था की कल्पना की जा सकती है। युद्ध का खतरा हर हालत में टलना चाहिए राष्ट्रों के बीच टकराव खत्म होना चाहिए राष्ट्रों के बीच गुटबंदी भी नहीं रहनी चाहिए ऐसी व्यवस्था हमें बनानी चाहिए।

4 कर्म और भाग्य पर चर्चा। भाग्य अधिक प्रभावशाली होता है या कर्म, यह विषय लंबे समय से विवादास्पद रहा है, इस पर कभी एकमत नहीं हो सका। मेरे अपने विचार में, मुझे यह सच्चाई दिखती है कि कर्म से ही भाग्य का निर्माण होता है, भाग्य से कर्म प्रभावित नहीं होता। भाग्य बाद में बनता है, कर्म पहले आता है, परंतु समाज के सुव्यवस्थित संचालन के लिए भाग्य को महत्व दिया जाता है। भाग्य को अधिक महत्वपूर्ण बताना यह व्यवस्था का भाग है, वैज्ञानिक नहीं। इसीलिए, जो मार्गदर्शक होते हैं, वे अच्छी तरह जानते हैं कि कर्म प्रधान होता है, भाग्य नहीं, लेकिन हर मार्गदर्शक अन्य तीन रक्षक, पालक और सेवकों को इस बात पर विश्वास दिलाता है कि भाग्य ही प्रबल होता है, कर्म से भाग्य नहीं बनता। इसका उद्देश्य क्या है, इस पर समझने की जरूरत है। मार्गदर्शक यथार्थ जानते हैं, लेकिन उनकी जिम्मेदारी है कि समाज के अन्य लोग सामाजिक व्यवस्था के अनुसार चलें, इसीलिए उन्हें भाग्य पर विश्वास करने की ट्रेनिंग दी जाती है। मैं इस बात को अच्छी तरह समझ चुका हूं कि वर्तमान दुनिया में जो भी भाग्य को महत्वपूर्ण बताया जा रहा है, वह पूरी तरह गलत है, क्योंकि हमारी वर्ण व्यवस्था समाप्त हो चुकी है। यह बाबा बेंगा, नास्त्रेदमस, राशिफल, बाबा बागेश्वर, यह सब बेकार की बातें हैं, इनका समाज में किसी तरह का कोई लाभ नहीं है। बल्कि, इससे कुछ न कुछ नुकसान ही हो रहा है, क्योंकि इन लोगों के प्रचार के कारण समाज में मार्गदर्शन निकल ही नहीं पा रहे हैं। पुराने जमाने में यह धर्मगुरु सिर्फ दान पर चलते थे, वर्तमान समय में यह धर्मगुरु व्यापार कर रहे हैं, इनकी नीयत ठीक नहीं है। फिर भी, इन्हें किसी कानून से नहीं रोका जा सकता, क्योंकि इस प्रकार के लोगों को कमजोर करना मार्गदर्शकों की जिम्मेदारी है, यह समाज का काम है। हम नई व्यवस्था में इस प्रकार की वर्ण व्यवस्था को तैयार करेंगे, जिसमें मार्गदर्शकों की अलग भूमिका हो, मार्गदर्शित अलग हों। मार्गदर्शक किसी एक व्यवस्थित परीक्षा के आधार पर बने मार्गदर्शकों पर एक कठोर नियंत्रण की प्रणाली भी विकसित की जाए। इस प्रकार की नई समाज व्यवस्था हम तैयार कर रहे हैं, जिसमें मार्गदर्शकों पर नियंत्रण के लिए एक अलग व्यवस्था होगी और मार्गदर्शकों के मार्गदर्शन के लिए मार्गदर्शकों को प्रोत्साहित भी किया जाएगा।

5 वर्तमान दुनिया में लगातार झूठ बोलने वालों की संख्या बढ़ती जा रही है। यह समस्या एक विकराल स्वरूप ग्रहण करती जा रही है। स्वतंत्रता के बाद मैंने देखा था कि उस समय भारत में झूठ बोलने वालों की संख्या बहुत कम थी। न्यायालय में भी करीब आधे लोग ही झूठ बोल पाते थे, आधे लोग झूठ नहीं बोलते थे। समाज में तो झूठ बोलने वाले प्रायः होते ही नहीं थे। इसलिए हमारे संवैधानिक व्यवस्था में यह प्रावधान किया गया कि यदि कोई व्यक्ति थाने में कोई शिकायत करता है, तो उसे सच मानकर लिखा जाएगा। यह मान्यता भी बनी कि जो व्यक्ति कुछ कहता है, उसे झूठा प्रमाणित करना व्यवस्था का काम है, उसका नहीं, क्योंकि आमतौर पर लोग झूठ नहीं बोलते। महिलाएं तो सेक्स संबंधी अपराधों में झूठ बोलती ही नहीं थीं और इसीलिए उन्हें बहुत अधिक विश्वसनीय मान्यता दी गई। लेकिन वर्तमान स्थिति पूरी तरह उलट गई है। अब न्यायालय में तो कोई सच बोलता ही नहीं है। बहुत ही गांव के रहने वाले, एकदम गरीब लोग भले ही पुलिस में न्यायालय में सच बोल दें, वे भी अफवाह स्वरूप। समाज में भी झूठ बोलने वालों की संख्या लगभग 70% हो गई है। धार्मिक मामलों में भी 30-40% लोग अब झूठ बोलने लगे हैं। इसलिए आज यह समय आ गया है कि अब हमारी संवैधानिक व्यवस्था में बदलाव किया जाए। कोई व्यक्ति थाने में रिपोर्ट करता है, वह सच ही है, अब यह न माना जाए। अब यह माना जाए कि वह झूठ ही है। कोई व्यक्ति गवाही देता है, तो वह सच ही बोलता है, यह न माना जाए। अब तो इस तरह का भी बदलाव करने की जरूरत है कि किसी भी व्यक्ति को जो पुलिस के द्वारा संदिग्ध है, उसके

कथन का परीक्षण करने की आवश्यकता है। उसे इस बात के लिए बाध्य किया जाए कि वह अपने कथन को पुष्ट करें। हम ऐसी व्यवस्था भी करें कि जो व्यक्ति न्यायालय में झूठ बोलता है, उसे कठोर दंड दिया जाए। सच बोलने वाले के अपराध में दंड कम दिया जाए। इस तरह हम धीरे-धीरे झूठ बोलने को निरूत्साहित कर सकते हैं। समाज में सत्य बोलने को प्रोत्साहित करना बहुत महत्वपूर्ण कार्य माना जाना चाहिए। अब तक यह कार्य सिर्फ धर्म और समाज के जिम्मे था, अब इस कार्य में व्यवस्था को भी लगना चाहिए, क्योंकि राजनीतिक संवैधानिक व्यवस्था ही झूठ को ज्यादा प्रोत्साहित कर रही है और इस व्यवस्था के द्वारा अब झूठ को रोकने की दिशा में कार्य करने की जरूरत है।

6 मांगने की आदत भी एक सामाजिक बुराई बनती जा रही है। हमारी दान देने की अच्छी प्रवृत्ति का खुलकर दुरुपयोग हो रहा है। क्योंकि मांगना एक दुकानदारी बन गई है। दान देने वालों की संख्या और मात्रा सीमित होती है और मांगने वालों की मात्रा और संख्या असीमित होती जा रही है। दान देने वाले अपने को ठगा हुआ महसूस कर रहे हैं और मांगने वाले अपनी जीत प्रचारित कर रहे हैं। जिन लोगों को किसी वस्तु की आवश्यकता है, वे बेचारे पीछे रह जा रहे हैं और धूर्त नाटकबाज अपनी मांगने की कला के आधार पर लाभ उठा रहे हैं। इस प्रवृत्ति का दुरुपयोग पहले भी होता था, लेकिन बहुत कम होता था। वर्तमान समय में तो हम देख रहे हैं कि मांगना एक कला बन गई है। इस बीमारी को कैसे पहचाना जाए, कैसे रोका जाए, यह एक बहुत बड़ी समस्या है, क्योंकि यदि इस बीमारी को रोकने के नाम पर दान देने की प्रवृत्ति को रोका गया, तो इसका नुकसान भी हो सकता है। और यदि नहीं रोका गया, तब भी उसका नुकसान स्वाभाविक है, क्योंकि धीरे-धीरे दान देने की प्रवृत्ति लोगों में घटती जाएगी और मांगने वालों की संख्या बढ़ती जाएगी। वर्तमान भारत की स्थिति तो बहुत ही चिंता जनक है। मैंने अपने पूरे जीवन काल में मांगने वालों को न देने की पूरी सावधानी रखी। मैंने चंदा तो कभी किसी को दिया ही नहीं, दान देने में भी सावधानी रखी। इसके बाद भी मांगने वालों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है। बिना मांगे कोई देता नहीं है और मांगने के बाद देना एक बहुत बड़ी बुराई है। चंदा मांगना तो अप्रत्यक्ष रूप से धंधा बन गया है, लेकिन दान का भी बहुत दुरुपयोग हो रहा है। इसलिए समय आ गया है कि हम गंभीर विचारवान लोग मिल बैठकर इस समस्या का समाधान खोजें।

7 यह बात पूरी दुनिया में देखी जा रही है कि जो व्यक्ति मजबूत है, वह व्यवस्था की बात करता है, न्याय की नहीं। और जब उसी व्यक्ति पर कोई मजबूत आक्रमण करता है, तब वह न्याय की बात करने लगता है। यह एक सिद्धांत है कि न्याय महत्वपूर्ण है और न्याय की सुरक्षा व्यवस्था ही कर सकती है, कोई भी अन्य नहीं। यदि आप व्यवस्था के भाग नहीं हैं, तो आप न्याय की मांग करते रहेंगे और आपको सुरक्षा नहीं मिल पाएगी। व्यवस्था के मामले में वर्तमान दुनिया में नाटो देश समूह सबसे अधिक सफल है। नाटो के साथ प्रतिस्पर्धा में साम्यवादी देश का समूह है। प्रश्न उठता है कि ईरान किस समूह से न्याय चाहता है? ईरान ने किस समूह को ताकत दी है? आप परमाणु बम एक तीसरी ताकत के रूप में बनाना चाहते हैं, तो प्रश्न उठता है कि आपको कौन सुरक्षा देगा? आपको न्याय चाहिए, किंतु यह सोचना पड़ेगा कि आपको न्याय क्यों दिया जाए। क्या आपके साथ कोई ऐसा अन्याय हो रहा है जिसके लिए दुनिया आपको सुरक्षा दे? आप यदि एटम बम बना रहे हैं, तो दूसरों की सुरक्षा के लिए बना रहे हैं या अपनी ताकत बढ़ाने के लिए बना रहे हैं? इस बात की क्या गारंटी है कि आप अपनी ताकत दूसरों की मदद करने में लगाएंगे, डराएंगे नहीं? और यदि इस बात की कोई गारंटी नहीं है, तो दुनिया अमेरिका के खिलाफ ईरान को खड़ा करने में क्यों मदद करें? दुनिया को इससे क्या लाभ होगा? अभी कुछ वर्षों में दो देशों में ऐसे साफ-साफ युद्ध हुए, उनमें रूस ने अपनी व्यवस्था की ताकत पर यूक्रेन के साथ अन्याय किया। यूक्रेन की स्वतंत्रता थी कि वह किसी भी देश के साथ शांतिपूर्वक मिल सकता है, लेकिन रूस ने यूक्रेन पर आक्रमण कर दिया। यह प्रत्यक्ष रूप से अन्याय दिखता है, लेकिन रूस व्यवस्था की बात मानने को तैयार नहीं था। ईरान ने हमेशा ही लेबनान में गाजा पट्टी में यूनान में अन्य लोगों को खड़ा करके इजरायल तथा अन्य देशों को परेशान करने का प्रयास किया। आज इजरायल ने न्याय की मांग की और अमेरिका ने खड़ा होकर इजरायल की मदद की। इसमें दोषी कौन है? ईरान को यदि न्याय चाहिए, तो क्या ईरान में कभी दूसरे देशों के न्याय की इज्जत की? और यदि दादागिरी का प्रतिस्पर्धा होगा, तो उसमें न्याय-न्याय चिल्लाने की कोई जरूरत नहीं है। यदि आपकी सारी दुनिया में इस तरह की छवि बन जाएगी कि आप दुनिया के अन्य देशों को परेशान नहीं करते हैं, तब यदि आपको कोई परेशान करेगा, तो दुनिया आपके प्रति सहानुभूति रख सकती है। अन्यथा ईरान को यह मामला स्वयं निपटाना चाहिए। या तो आप ताकत का प्रतिस्पर्धा बंद कर दीजिए और अन्यथा बर्बादी के लिए तैयार रहिए। नाटो देश आपको प्रतिस्पर्धा करने की स्वतंत्रता नहीं देंगे। अंतिम निर्णय आपको करना है।

8 65 वर्षों की लगातार रिसर्च के बाद हम लोगों ने ऋषिकेश में बैठकर 7 वर्ष पहले यह अंतिम निष्कर्ष निकाला कि व्यक्ति के स्वभाव में जो बदलाव आ रहा है वह बहुत घातक है। दुनिया के प्रत्येक व्यक्ति में स्वार्थ और हिंसा का भाव बढ़ रहा है। इसके कारण और समाधान इन दोनों पर गंगा किनारे बैठकर रिसर्च किया गया। समाज में वर्तमान समय में सबसे पहली समस्या यह है कि विचार मंथन के बजाय विचार प्रचार महत्वपूर्ण होता जा रहा है। पुराने जमाने में पहले विचार मंथन होता था, उसके बाद निष्कर्ष निकलता था और उसके बाद निष्कर्ष समाज के सामने पहुंचता था, लेकिन वर्तमान समय में बिना विचार मंथन किए और निष्कर्ष निकाले ही धूर्त लोग समाज में प्रचार माध्यमों से अपने झूठ को स्थापित करते रहे हैं। संसद में भी विचार मंथन नहीं होता है, बल्कि संसद में भी विचार प्रचार का प्रभाव होता है। न्यायपालिका भी ऐसे प्रचार से प्रभावित होती है। हम इसे दो दिशाओं में रोकने का प्रयास करेंगे। पहले विचार मंथन की प्रक्रिया को हम शुरू कर रहे हैं और यह लगातार जारी है। इस विचार मंथन में हम सोशल मीडिया को अधिक से अधिक अपना आधार बना रहे हैं। दूसरा, हम संसद का स्वरूप बदल देंगे। संसद में अब राजनीतिज्ञ नहीं, अधिवक्ता नहीं, कानून के विशेषज्ञ नहीं, बल्कि संसद में विचारक जाएंगे, समाजशास्त्री जाएंगे। संसद का चुनाव लड़ने वालों को एक विशेष परीक्षा पास करनी होगी। इस तरह जब तक विचार प्रचार की जगह विचार मंथन का महत्व नहीं बढ़ेगा, तब तक समस्याओं का समाधान संभव नहीं है। और इसका सबसे अच्छा आधार है सोशल मीडिया। खुला विचार मंथन। हमारा संस्थान सोशल मीडिया के माध्यम से दिनभर विचार मंथन करता है और प्रतिदिन रात को जूम पर प्रत्यक्ष बैठकर भी 8:00 बजे से 9:30 बजे तक विचार मंथन करते हैं। हमें उम्मीद है कि दुनिया की सभी समस्याओं के समाधान की शुरुआत यहां से हो सकती है।

9 हमारे वर्तमान समाज व्यवस्था में सबसे बड़ी बाधक और सबसे अधिक घातक हमारी राजनीतिक व्यवस्था है। राजनीतिक व्यवस्था ने बुरी नीयत से समाज को तोड़ दिया है, समाज को गुलाम बना लिया है। हम लोगों ने यह अच्छी तरह अनुभव किया है कि वर्तमान भारत में राजनीतिक व्यवस्था में सुधार की जरूरत नहीं है, बल्कि बदलाव की जरूरत है। राजनीतिक व्यवस्था में सुधार की चर्चाएं जारी रहें, हमें कोई आपत्ति नहीं है, लेकिन हम अब सुधरी हुई राजनीतिक व्यवस्था के लिए नहीं, बदली हुई राजनीतिक व्यवस्था के लिए काम करेंगे। राजनीतिक व्यवस्था सुशासन दे सकती है, लेकिन स्वशासन दे ही नहीं सकती। हमने 70-75 वर्ष सुशासन के नारे के धोखे में बिता दिए, अब हमें सुशासन नहीं, स्वशासन चाहिए। इस दिशा में हम मां संस्थान के लोग निरंतर बढ़ रहे हैं। हम अब व्यवस्था परिवर्तन का नारा दे रहे हैं और इस व्यवस्था परिवर्तन की शुरुआत राजनीतिक व्यवस्था से होगी, और इस राजनीतिक व्यवस्था परिवर्तन की शुरुआत भी भारत से होगी। हम राजनीतिक व्यवस्था में सुधार की चुपचाप प्रतीक्षा कर सकते हैं, लेकिन इस सुधार में अपनी ताकत नहीं लगा सकते। राजनीतिक व्यवस्था में बदलाव के लिए भी सिर्फ एक ही मार्ग है, और वह है तंत्र मुक्त संविधान। राजनीतिक व्यवस्था का सूत्र है संविधान, और संविधान को ही राजनीतिक व्यवस्था ने गुलाम बनाकर अपना हथियार बना लिया है। संविधान के नाम पर ही वे हम लोगों को गुमराह करते हैं, हम पर शासन करते हैं। संविधान को भगवान कहते हैं और अपने को पुजारी कहते हैं, जबकि संविधान तो राजनेताओं का गुलाम है। इसलिए हम सब मिलकर सुधरा हुआ संविधान नहीं, बल्कि तंत्र मुक्त संविधान की योजना पर कार्य करें। नई व्यवस्था में संविधान बनाने में अंतिम भूमिका लोक की होगी, तंत्र की नहीं। इसलिए हम आप सब मिलकर तंत्र मुक्त संविधान युक्त समाज व्यवस्था की दिशा में आगे बढ़ें।

10 समझदारी यही मानी जाती है कि जो चीज जैसी है, उसे उसी तरह समझा जाए। सांप को रस्सी और रस्सी को सांप समझना भ्रम बन जाता है। वर्तमान समाज व्यवस्था में इसी तरह का भ्रम फैल रहा है। वर्तमान समय में शिक्षा, स्वास्थ्य और पत्रकारिता पूरी तरह व्यवसाय है, इन्हें समाज सेवा मानना अपने को धोखा देना है। इसी तरह राजनीति, धर्म और समाज सेवा, ये तीनों समाज सेवा हैं, इन तीनों को व्यापार मानना उचित नहीं है। वर्तमान भारत में बिल्कुल उल्टा हो रहा है। अर्थात पत्रकारिता, शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाएं इन तीनों को समाज में सामाजिक कार्य मानकर प्रचारित किया जा रहा है, जबकि यह तीनों ही शुद्ध व्यवसाय हैं। इससे समाज में भ्रम फैल रहा है। दूसरी ओर राजनीति, धर्म और सामाजिक कार्य, ये तीनों पूरी तरह समाज सेवा होना चाहिए, लेकिन वर्तमान समय में तीनों ही व्यवसाय बन गए हैं। ऐसी स्थिति में पूरी दुनिया एक भ्रम में जी रही है। पूरी दुनिया शिक्षा, स्वास्थ्य और पत्रकारिता को समाज सेवा मानने लगी है और राजनीति, धर्म, एनजीओ को व्यापार। हम इस प्रकार की नई व्यवस्था पर कार्य कर रहे हैं, जिसमें पत्रकारिता, शिक्षा और स्वास्थ्य को व्यापार मान लिया जाएगा और राजनीति, धर्म तथा एनजीओ को व्यापार बनने से पूरी तरह रोक दिया जाएगा। क्योंकि इन दोनों को अलग-अलग करना ही वर्तमान समय में एक समाधान हो सकता है। हम किसी भी परिस्थिति में इन दोनों को एक न होने देंगे।

11 नई समाज व्यवस्था में सामाजिक समस्याओं का समाधान समाज व्यवस्था करेगी, राज्य अपराधिक समस्याओं का समाधान करेगा। दो ही कार्य अपराध माने जाएंगे: एक बल प्रयोग और दूसरा जालसाजी धोखाधड़ी। इसके अतिरिक्त कोई अन्य तीसरा कार्य अपराध नहीं माना जाएगा। प्रत्येक व्यक्ति किसी परीक्षा से पास करेगा। उस परीक्षा के बाद ही उसे विशेष माना जाएगा, अर्थात परीक्षा पास न करने वाले श्रमिक माने जाएंगे। जो परीक्षा पास करेंगे, उस परीक्षा में भी जो तीन भाग होंगे, तीनों की अलग-अलग पहचान होगी। सबको अलग-अलग करने के लिए जो पहचान होगी, वह निश्चित होगी। यदि कोई व्यक्ति धोखा देने की नीयत से किसी दूसरे की पहचान को धारण कर लेता है, तो इसे बहुत ही गंभीर अपराध माना जाएगा। आज भी इस प्रकार की पहचान बनी हुई है। सन्यासियों के लिए अलग पोशाक है, वकील अलग है, पुलिस वाले अलग हैं, और इस तरह बहुत लोगों की अलग-अलग पहचान बनी हुई है और आगे भी बनाई जाएगी। यदि कोई व्यक्ति सन्यास आश्रम में न होते हुए सन्यासी की पोशाक धारण करेगा, तो उसे आजीवन कारावास का दंड दिया जा सकता है, क्योंकि यह कार्य अपराध की श्रेणी में माना जाएगा। मैं फिर से स्पष्ट कर दूं कि किसी को धोखा देने के लिए अपनी पहचान बदलना एक गंभीर अपराध माना जाएगा। यदि कोई महिला अविवाहित होने के बाद भी सिंदूर लगाएगी, तो उसे आजीवन कारावास का दंड दिया जाएगा। इस तरह हर मामले में प्रत्येक वर्ग की एक निश्चित पहचान होगी और उस पहचान की नकल करना गंभीर अपराध माना जाएगा।

"..दायित्व किसी अन्य के द्वारा सौंपा जाता है, जिसकी जवाबदेही काम करने वाले की होती है, जबकि कर्तव्य सिर्फ स्वैच्छिक होता है। दायित्व के प्रति व्यक्ति को उत्तरदायी होना पड़ता है; यदि वह अपने कार्य पूरे न कर सके, तो वह सफाई देने के लिए बाध्य है, उसे इसके लिए दंडित भी किया जा सकता है..."

12 वर्तमान दुनिया में वर्ग निर्माण एक बहुत बड़ी समस्या है। प्रवृत्ति के आधार पर समाज में व्यक्ति दो ही प्रकार के होते हैं: एक अच्छे और बुरे। एक कानून का पालन करने वाले, दूसरे कानून तोड़ने वाले; एक सामाजिक नियमों का पालन करने वाले, दूसरे सामाजिक नियमों के विपरीत कार्य करने वाले। एक को हम कहते हैं अपराधी और एक को कहते हैं सामाजिक। इस तरह व्यक्ति के आधार पर वर्ग दो ही होते हैं और दो ही हो सकते हैं। राज्य की भूमिका सिर्फ एक होती है कि वह अच्छे लोगों की सुरक्षा की गारंटी देता है और बुरे लोगों को बुरे कार्य करने से रोकता है। राज्य की भूमिका इससे अधिक कुछ नहीं होती है। धर्म की भी सिर्फ यही भूमिका होती है कि धर्म अच्छे लोगों को प्रोत्साहित करता है और बुरे लोगों को निरुत्साहित करता है। आज समाज में अच्छे और बुरे के वर्ग विभाजन न करके धर्म जाति के आधार पर संगठन बनाने की बुराई लगातार बढ़ती जा रही है, क्योंकि राज्य की नीयत खराब है और राज्य समाज को गुलाम बनाकर रखने के लिए सामाजिक एकजुटता को तहस-नहस करता है। समाज कभी एकजुट न हो, इसी के लिए वर्ग निर्माण किए जाते हैं और जब वर्ग निर्माण जाति, धर्म, भाषा, क्षेत्रीयता, लिंग, उम्र, गरीब, अमीर के नाम पर होते हैं, तब इन तथाकथित वर्गों में अपराधी लोग छिप जाया करते हैं। इसलिए हम नई व्यवस्था में वर्ग निर्माण को किसी भी रूप में अस्वीकृत करेंगे, उसे सामाजिक और संवैधानिक मान्यता नहीं देंगे। हम समझ में दो ही वर्ग बनाएंगे: एक अच्छे और एक बुरे। अन्य आधार पर बने सभी संगठनों को हम भंग कर देंगे।

13 यह एक सीधी सी बात है कि दायित्व और कर्तव्य के बिल्कुल अलग-अलग अर्थ होते हैं। दायित्व किसी अन्य के द्वारा सौंपा जाता है, जिसकी जवाबदेही काम करने वाले की होती है, जबकि कर्तव्य सिर्फ स्वैच्छिक होता है। दायित्व के प्रति व्यक्ति को उत्तरदायी होना पड़ता है; यदि वह अपने कार्य पूरे न कर सके, तो वह सफाई देने के लिए बाध्य है, उसे इसके लिए दंडित भी किया जा सकता है, क्योंकि वह उसका दायित्व है। लेकिन कर्तव्य न करने के लिए किसी व्यक्ति को दंडित नहीं किया जा सकता। कर्तव्य का उत्तरदायित्व सिर्फ अपने साथ ही होता है; कोई अन्य इकाई कर्तव्य न करने के लिए दंड नहीं दे सकती। इस तरह कर्तव्य पूरी तरह स्वैच्छिक होता है, आत्म-समर्पित होता है और उसके लिए समाज बहिष्कृत किया जा सकता है, दंडित नहीं। वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था ने दायित्व और कर्तव्य को एक साथ मिलाकर विकृत कर दिया है। हम नई समाज व्यवस्था में दायित्व और कर्तव्य को अलग-अलग करेंगे; कर्तव्य न करने के लिए व्यक्ति की सिर्फ आलोचना हो सकती है, दंडित नहीं, और दायित्व पूरे न करने के लिए व्यक्ति को दंडित भी किया जा सकता है।

14 समाज व्यवस्था का एक सिद्धांत है कि समाज मार्गदर्शकों और रक्षकों की संयुक्त जिम्मेदारी से चलता है। दोनों के कार्य बंटे-बंटे रहते हैं। यदि समाज में कोई अपराध दो प्रतिशत से अधिक आबादी करती है, तो उसमें मार्गदर्शकों की निष्क्रियता भी दोषी हो जाती है। अगर अपराध 2% से कम लोग करते हैं, तो उसकी जिम्मेदारी सिर्फ रक्षकों की होती है। वर्तमान दुनिया में हिंसा के प्रति विश्वास बढ़ रहा है, प्रत्येक व्यक्ति के स्वभाव में ताप वृद्धि हो रही है। यह प्रतिशत 90 से ज्यादा तक पहुंच गया है। ऐसी स्थिति में इस स्वभाव में हिंसा के बढ़ने का दोष सिर्फ हम राज्य को नहीं दे सकते; कहीं न कहीं हमारे मार्गदर्शकों की भी गलती है। व्यक्ति के स्वभाव में हिंसा का बढ़ना वर्तमान समय की सबसे बड़ी समस्या मानी जानी चाहिए। इसे हम समाज के लोग और सरकार के लोग दोनों ही मिलकर इस आपातकालीन समस्या मानना शुरू करें। इस समस्या के समाधान के रूप में हमें दो दिशाओं में एक साथ काम करना होगा। पहली दिशा यह होगी कि हिंसा और बल प्रयोग को बचपन से ही नियंत्रित करना चाहिए। इसलिए परिवार व्यवस्था को इस बात की जिम्मेदारी दी जानी चाहिए कि परिवार अपने सभी सदस्यों को अनुशासित करें। हमारे धर्म प्रचारकों को भी यह बात ठीक से समझ लेनी चाहिए कि किसी भी परिस्थिति में समाज में हिंसा के औचित्य को रोकने की आवश्यकता है, प्रोत्साहित करने की नहीं। राज्य को भी यह बात निश्चित कर लेनी चाहिए कि सुरक्षा और न्याय उसका दायित्व है; किसी भी व्यक्ति के सामने अपनी सुरक्षा और न्याय के लिए अपनी चिंता खुद करने की मजबूरी नहीं आनी चाहिए। इस तरह हमारे मार्गदर्शक, परिवार व्यवस्था और राज्य व्यवस्था तीनों ही मिलकर हम व्यक्ति के स्वभाव में आ रहे इस बदलाव को रोक सकते हैं। वर्तमान दुनिया में हम जितना पर्यावरण पर चिंता कर रहे हैं, उससे अधिक हमें मानव स्वभाव की ताप वृद्धि पर चिंता करनी चाहिए। यह कार्य यदि दुनिया शुरू न करें, तो हम भारत से शुरू करें। यह कार्य यदि और लोग शुरू न करें, तो हम अपने परिवार से शुरू करें। यह कार्य यदि और लोग शुरू न करें, तो हम आप जैसे मार्गदर्शक शुरू करें। साथ ही हम सरकारों को इस बात के लिए दबाव डालें कि वह सुरक्षा और न्याय को सर्वोच्च प्राथमिकता दें।

1 मैं बचपन से ही समझता था कि हमारे समाज की सभी समस्याओं के समाधान में गांधी मार्ग ही सबसे अधिक सहायक है। यह भी उम्मीद दिख रही थी कि स्वतंत्रता के बाद हमारा देश गांधी मार्ग से सारी दुनिया का मार्गदर्शन करेगा, लेकिन दो लोगों के षड्यंत्र के कारण हमारी सारी योजना असफल हो गई और वह दो लोग थे पंडित नेहरू और अंबेडकर। दोनों ही एक दूसरे के विरोधी थे, लेकिन दोनों ही गांधी मार्ग को उलटने में एक साथ काम कर रहे थे। गांधी ग्राम स्वराज चाहते थे और यह दोनों केंद्रित सत्ता चाहते थे। गांधी वैचारिक संतुलनवादी हिंदुत्व को महत्व देते थे और यह दोनों हिंदुत्व के ही विरोधी थे। गांधी किसी भी प्रकार की सामाजिक हिंसा के विरुद्ध थे, यह दोनों मुस्लिम आतंकवाद और साम्यवाद के प्रति नरम रुख रखते थे। गांधी वर्ग समन्वय चाहते थे, यह दोनों वर्ग विद्वेष के पक्षधर थे। गांधी मजदूर महाजन की एकता चाहते थे और यह दोनों मजदूर महाजन के बीच टकराव चाहते थे। गांधी श्रम और बुद्धि के बीच प्रत्यस्पर्धा चाहते थे, यह दोनों श्रम शोषण के पक्षधर थे और बुद्धिजीवियों को अधिक से अधिक रियायत देना चाहते थे। गांधी हिंदी के समर्थक थे और यह दोनों अंग्रेजी के। अन्य अनेक बातें भी हैं जो इन दोनों ने मिलकर गांधी विचारों के उलट अपनी नीतियां समाज पर थोप दीं। उसका ही यह परिणाम हुआ कि आज भारत भौतिकता के मामले में तो दुनिया के साथ कंपटीशन कर रहा है, लेकिन नैतिकता के मामले में रसातल तक नीचे गिर गया है क्योंकि यह दोनों भौतिक उन्नति के मामले में भारत को आगे बढ़ाना चाहते थे और गांधी नैतिकता के साथ भौतिक उन्नति के पक्षधर थे। आज अगर भारत में इतना नैतिक पतन हुआ है, उस पतन के जिम्मेदार नेहरू और अंबेडकर ही माने जा सकते हैं। आज भी हमारा देश नेहरू परिवार और अंबेडकर वादियों के जाल से पूरी तरह मुक्त नहीं हो सका है क्योंकि आज भी गांधी के नाम की दुकानदारी करने वाले ये अंबेडकरवादी और नेहरू वादी हार मानने के लिए तैयार नहीं हैं। अब समय आ गया है कि हम गांधी मार्ग के महत्व को समझें और गांधी के नाम की दुकानदारी करने वाले नेहरू परिवार का राजनीतिक बहिष्कार करें।

2 मैंने आज एक पोस्ट लिखी थी जिसके अनुसार गांधी की हत्या में कुछ ऐसे लोगों पर उंगली उठाई गई थी जो गांधी के भक्त माने जाते हैं। मैं मुख्य रूप से यह प्रश्न उठाया था कि गांधी की सारी नीतियों को नेहरू ने उलट दिया, किसी नेहरू भक्त ने इस बात को स्पष्ट नहीं किया कि मैंने जो लिखा है वह अर्ध सत्य है या असत्य है। सबने मेरी नियत पर प्रश्न उठाया। मैंने यह भी शंका व्यक्त की थी कि गांधी को ना मारकर नेहरू, पटेल, जिन्ना की हत्या क्यों नहीं की गई क्योंकि देश विभाजन में गांधी की कोई भूमिका नहीं थी। मैंने यह भी प्रश्न उठाया था कि गांधी हत्या के बाद नेहरू, पटेल, अंबेडकर इन तीनों ने आकर विभाजन के मामले में गांधी के निर्दोष होने के विषय में स्पष्ट कोई बात क्यों नहीं कही। मेरा यह मानना था कि गांधी हत्या में एक बहुत बड़ा षड्यंत्र है, जिस षड्यंत्र में नेहरू, अंबेडकर, सावरकर और माउंटबेटन की कोई ना कोई भूमिका हो सकती है। मैं फिर से यह मांग करता हूं कि इस प्रकरण पर गंभीरता से रिसर्च होना चाहिए।

राहुल गांधी

1 जिस तरह सारी दुनिया में ट्रंप की भूमिका राजनीतिक उथल-पुथल मचा रही है, ट्रंप और पुतिन के संबंधों का जो राजनीतिक प्रभाव दिख रहा है, ठीक वैसा ही बदलाव भारत में भी स्पष्ट हो रहा है। पिछले 6 महीने से राहुल गांधी की नीतियों में बहुत बदलाव दिख रहा है। पहले कांग्रेस पार्टी गांधी के मार्ग पर चलने की बात करती थी, अहिंसा और शांति के पक्ष में दिखती थी। दूसरी ओर संघ और सावरकरवादी हिंसा के पक्षधर दिखाई देते थे, लेकिन धीरे-धीरे संघ की नीतियों में बदलाव आया। अब संघ ने हिंदू राष्ट्र की जगह धर्मनिरपेक्षता की बात करनी शुरू कर दी और इस तरह नरेंद्र मोदी और संघ गांधी के मार्ग पर चलने लग गए। ऐसी स्थिति में राहुल गांधी ने भी अपना मार्ग बदलना उचित समझा। उन्होंने अब मोहब्बत की दुकान की जगह युद्ध की भाषा बोलनी शुरू कर दी। अब राहुल गांधी लगातार पाकिस्तान से युद्ध करने की बात कर रहे हैं, अमेरिका से लड़ने की बात कर रहे हैं। अब राहुल गांधी दुनिया के हर देश से युद्ध की बात कर रहे हैं और नरेंद्र मोदी अब शांति की बात कर रहे हैं। धीरे-धीरे अब ऐसा दिख रहा है कि राहुल गांधी संघ और नरेंद्र मोदी की दिनभर आलोचना करेंगे और सावरकर के विषय में चुप रहना शुरू कर रहे हैं, क्योंकि राहुल गांधी को ऐसा महसूस हो रहा है कि युद्ध की भाषा बोलने से सावरकरवादी का उन्हें अच्छा समर्थन मिल सकता है। इस तरह संघ और सावरकरवादी के बीच फूट डालकर राहुल गांधी एक नया मार्ग बनाना चाहते हैं। यही कारण है कि पिछले कुछ महीनों से सावरकरवादी नरेंद्र मोदी और मोहन भागवत के प्रति आलोचनात्मक रूप अपना रहे हैं। उन्हें शांति की भाषा पसंद नहीं है, उन्हें अहिंसा पसंद नहीं है, उन्हें गांधी मार्ग पसंद नहीं है। उन्हें पसंद है उग्र हिंदुत्व, जबकि नरेंद्र मोदी और मोहन भागवत नरम हिंदुत्व की दिशा में बढ़ रहे हैं। अभी यह बात नहीं कही जा सकती कि ट्रंप दुनिया में कितना सफल होते हैं और राहुल गांधी भारत में कितना सफल होते हैं, लेकिन अब इस सारी लड़ाई में गांधी की परिभाषा बदल रही है। नरेंद्र मोदी गांधी मार्ग की दिशा में बढ़ रहे हैं और राहुल गांधी गांधी मार्ग के विरुद्ध हिंसा के साथ अपने को जोड़ रहे हैं।

2 मैंने पनौती शब्द पहले कभी नहीं सुना था, लेकिन लगभग एक वर्ष पहले जब लोकसभा चुनाव में नरेंद्र मोदी कुछ कमजोर हुए, तो अति उत्साह में राहुल गांधी ने नरेंद्र मोदी के लिए पनौती शब्द का उपयोग किया और इस शब्द का वह दो-तीन महीने तक उपयोग करते रहे। लेकिन जल्दी ही उनकी खुशी गम में बदल गई जब यही शब्द राहुल गांधी के लिए भारी पड़ने लगा। अब पिछले छह महीने से राहुल गांधी दुनिया में जहां भी हाथ डालते हैं, वहां अपशकुन हो जाता है और इसलिए राहुल गांधी के लिए पनौती शब्द बहुत बुरा प्रतीत हो रहा है। अभी राहुल गांधी ने कनाडा में नरेंद्र मोदी को आमंत्रण ना मिलने पर तुरंत ही प्रतिक्रिया दी, जबकि नरेंद्र मोदी को वहां आमंत्रण भी मिला, सम्मान भी मिला। इसी तरह राहुल गांधी ने ईरान के मामले में भी जल्दबाजी की और ईरान का इतना जोर से समर्थन किया कि G7 के देशों में इसके विपरीत हुआ और उन्होंने इजरायल के पक्ष में प्रस्ताव पारित कर दिया। इस प्रकार की घटनाएं राहुल गांधी के जीवन में अभी पहली बार नहीं हो रही हैं। पिछले छह माह में राहुल गांधी जहां भी हाथ डाल रहे हैं, वहीं सामने वाले के हाथ जल जा रहे हैं। राहुल गांधी ने बड़े उत्साह से अमेरिका के चुनाव में बाइडेन का समर्थन किया था। उन्होंने उसी उत्साह में सोरोस और हिडन वर्ग की भी बहुत अधिक प्रशंसा की, परिणाम आपके सामने है। राहुल गांधी ने रोज-रोज अदानी को गालियां दी, परिणाम आपके सामने है। अब तो कुछ आम लोगों के बीच में ऐसा होने लगा है कि अगर उन्हें किसी भी तरह से प्रगति करनी है, तो किसी तरह राहुल गांधी अगर एक बार गाली देना शुरू कर दें, उनके भाग्य खुल सकते हैं, क्योंकि राहुल गांधी इस समय भारत में सबसे बड़े पनौती बन गए हैं।

3 राहुल गांधी हमेशा साफ बोलने वाले आदमी हैं, कभी भी किंतु-परंतु लगाकर बोलने में लाग-लपेट नहीं करते। आज राहुल गांधी ने यह बात साफ कर दी है कि भारत इसलिए हर मामले में पिछड़ रहा है कि भारत ने अंग्रेजी का विकास नहीं किया। सच्चाई यह है कि अंग्रेजी ही दुनिया की एक ऐसी भाषा है जो भारत को आगे ले जा सकती है। उन्होंने अमित शाह और भारत सरकार की इस बात के लिए आलोचना की कि ये लोग यह नहीं चाहते कि हमारे बच्चे अंग्रेजी पढ़ें, विदेश में जाएं, बड़ी-बड़ी नौकरियां करें, देश को आगे ले जाएं। ये तो भारत को वही पुरानी जगह पर धकेल कर रखना चाहते हैं। राहुल गांधी ने इस बात को खोलकर रख दिया कि किस तरह पंडित नेहरू से लेकर अब तक उनके परिवार में इस बात को छुपा कर रखा। ये हमेशा हिंदी, हिंदू, हिंदुस्तान का विरोध करते रहे और किंतु-परंतु लगाकर अपनी बात को ढकते भी रहे। राहुल गांधी ने पर्दा उठा दिया। अब भारत हिंदी, हिंदू, हिंदुस्तान से नहीं, अब भारत इंग्लिश, इस्लाम, ईसाइयत इंडिया से आगे बढ़ेगा। राहुल गांधी ऐसा भी सोच रहे होंगे कि हमारी वर्णमाला में ई शब्द तीसरे नंबर पर आता है और ह शब्द बिल्कुल अंत में। यही कारण है कि हम ह के पीछे पड़कर अपने को बहुत पीछे ले गए। अगर हम ई के साथ होते, तो हम वास्तव में बहुत आगे होते। इसीलिए राहुल गांधी इंग्लिश, इस्लाम, इंडिया को लेकर आगे बढ़ना चाहते हैं। यही है कि उन्होंने अपनी पार्टी का नाम भी इंडिया रखा है। राहुल की यह भी सोच है कि उत्तर भारत से तो उनका लगभग सफाया हो गया है, अब तो सिर्फ दक्षिण भारत ही उनकी मदद कर सकता है। इसलिए उन्होंने कुछ सोच-समझ कर ऐसा सूत्र आजमाया होगा, लेकिन राहुल गांधी ने यह बात कहकर अखिलेश यादव और तेजस्वी यादव के सामने एक संकट खड़ा कर दिया है। यह दोनों ही बेचारे इस विषय पर ना मुंह खोल सकते हैं, ना मुंह बंद कर सकते हैं। अब इस विषय पर हमारे हिंदी, हिंदू, हिंदुस्तान को सोचना है कि उसे इंग्लिश, इंडिया, इस्लाम, ईसाइयत के माध्यम से अपने बच्चों को विदेश भेजना है या हिंदी, हिंदू, हिंदुस्तान के माध्यम से पिछड़े हुए भारत में रखना है।

व्यक्ति समीक्षा

1 मैं रामबहादुर राय को 30 वर्षों से जानता हूं। वह एक गंभीर विचारक हैं। 30 वर्ष पहले ठाकुरदास जी बंग ने मेरा रामबहादुर राय से परिचय कराया था। उस समय मैं रामानुजगंज को केंद्र बनाकर भारतीय संविधान पर रिसर्च (शोध) कर रहा था और भारतीय संविधान के माध्यम से व्यवस्था परिवर्तन का मार्ग खोज रहा था। रामबहादुर राय भी इसी दिशा में चलकर व्यवस्था परिवर्तन की राह तलाश रहे थे। उस समय से हम दोनों वैचारिक धरातल पर एक साथ जुड़ गए और अब तक इस दिशा में लगातार सक्रिय हैं। हमारा यह मानना है कि 'संवैधानिक व्यवस्था परिवर्तन' ही वर्तमान दुनिया की सभी समस्याओं के समाधान की शुरुआत कर सकती है। और इसकी शुरुआत भारत से ही हो सकती है। रामबहादुर राय में कुछ विशेषताएं मैंने देखी हैं। उनके अंदर व्यवस्था परिवर्तन की एक गंभीर छटपटाहट है। ऐसी छटपटाहट मुझे वर्तमान भारत में किसी भी अन्य व्यक्ति में नहीं दिखी। उनमें एक विलक्षण गुण है कि वे विपरीत विचारों के लोगों के साथ भी अच्छा संवाद कर लेते हैं। वे प्रभाष जोशी जैसे संघ-विरोधी और गोविंदाचार्य जैसे संघ-समर्थक के साथ एक साथ बैठकर विचार कर सकते हैं। ऐसा संतुलन भी कुछ गिने-चुने विलक्षण व्यक्तियों में ही दिखता है। वह स्वतंत्रता के साथ अनुशासन को जोड़कर चलना जानते हैं। वह इस बात की सीमा समझते हैं कि स्वतंत्रता और अनुशासन के बीच किसी प्रकार का टकराव उचित नहीं है। उन्होंने व्यवस्था परिवर्तन की तलाश में गोविंदाचार्य जी के साथ लगातार संपर्क रखा। उन्होंने अरविंद केजरीवाल में भी व्यवस्था परिवर्तन की संभावनाएं देखीं, भले ही इस संबंध में उन्हें निराशा हाथ लगी। उन्होंने जीवन भर एक स्वतंत्र संविधान-सभा की योजना पर कार्य किया। यद्यपि उन्होंने अपनी कार्य प्रणाली में अनुशासन की सीमाओं को भी निरंतर समझा। दिल्ली में रहते हुए उन्होंने सुभाष कश्यप, देवेंद्र स्वरूप तथा अन्य लोगों के साथ मिलकर कई बार संविधान पर विचार मंथन आयोजित किया। मुझे भी उसमें कई बार जाने का सौभाग्य मिला। इस उम्र और स्वास्थ्य को देखते हुए भी वह अपने को न निराश समझ रहे हैं, न थका हुआ समझ रहे हैं- यह उनकी विशेषता है। रामबहादुर राय को हमारे राष्ट्रपति महोदय ने पद्म भूषण का सम्मान दिया है। यद्यपि यह सम्मान उनकी योग्यता से छोटा है। तथापि, उनकी योग्यता को अगर आंशिक रूप से भी पहचाना गया तो मैं भारत सरकार को इसके लिए बधाई देता हूं।

5 वर्तमान दुनिया में नरेंद्र मोदी ने धीरे-धीरे अपनी योग्यता का विश्वास दिला दिया है। भारत ही नहीं, सारी दुनिया यह समझने लगी है कि नरेंद्र मोदी के मुकाबले पूरी दुनिया में अभी और कोई समझदार नेता नहीं है। नरेंद्र मोदी उचित समय पर उचित निर्णय लेने की योग्यता रखते हैं। नरेंद्र मोदी कभी जोश में नहीं आते, कभी भावनाओं में नहीं बहते। हर मामले में गंभीरता से योजना बनाकर कार्य करते हैं। यही कारण है कि आज भारत सहित पूरी दुनिया में नरेंद्र मोदी की प्रशंसा हो रही है। अभी-अभी हमने देखा कि भारत-पाकिस्तान युद्ध के समय नरेंद्र मोदी ने जिस सूझबूझ का परिचय दिया, वह वास्तव में भूरी-भूरी प्रशंसा करने योग्य है। जिस समय नरेंद्र मोदी ने युद्धविराम स्वीकार किया, उस समय भारत की 99% जनता कश्मीर को पूरी तरह जीत लेने के पक्ष में खड़ी थी, लेकिन नरेंद्र मोदी ने भावनाओं में न बहकर सही निर्णय लिया। मैं उस समय महसूस कर रहा था कि युद्ध उन्माद गलत दिशा में जा रहा है, लेकिन मैं लाचार था और नरेंद्र मोदी ने ठीक निर्णय लिया। पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर को बलपूर्वक भारत में मिलाने से लाभ की अपेक्षा नुकसान बहुत अधिक होता। आज जो ईरान और इजराइल में हो रहा है, वही वातावरण भारत में बन गया होता। इसी तरह की एक घटना हम लोगों ने अभी और देखी कि लंबे समय से भारत में विदेशी मुसलमान का मामला लटक रहा था। एनआरसी की बात हो रही थी और कोई तरीका नहीं दिख रहा था। बड़ी आसानी से नरेंद्र मोदी ने अभी उसका हल निकाल लिया। अब न एनआरसी की बात हो रही है, न विदेशी मुसलमान की बात हो रही है। अब भारत में विदेशी मुसलमान का आना तो पूरी तरह बंद हो ही गया है, अब तो धीरे-धीरे दो-दो, चार-चार करके भारत से निकाले जा रहे हैं। यही कारण है कि आज भारत की जनता आंख बंद करके नरेंद्र मोदी के साथ है और यही कारण है कि दुनिया लगातार नरेंद्र मोदी पर विश्वास कर रही है।

योग का मतलब होता है जोड़ना। योग में तीन तरह की क्रियाएं एक साथ जुड़ती हैं: पहली है मानसिक शुद्धि, दूसरी है शारीरिक शुद्धि और तीसरी है आत्मिक शुद्धि। इन तीनों को मिलाकर योग कहा जाता है। मानसिक शुद्धि में यम और नियम शामिल होते हैं, शारीरिक शुद्धि में आसन, प्राणायाम और प्रत्याहार का योगदान है, और आत्मिक शुद्धि में धारणा, ध्यान और समाधि शामिल होते हैं। लेकिन योग साधना में यह बात अनिवार्य बताई गई है कि शुरुआत मानसिक शुद्धि से करनी चाहिए, शारीरिक शुद्धि से नहीं। शारीरिक शुद्धि के माध्यम से मानसिक शुद्धि पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है, लेकिन यदि मानसिक शुद्धि होगी तो व्यक्ति आसानी से शारीरिक शुद्धि की ओर बढ़ जाता है। इसीलिए मानसिक शुद्धि को प्राथमिकता दी गई है। जब वर्तमान भारत में यह बात निश्चित हो गई कि हमारा पूरा देश या संपूर्ण विश्व समाज मानसिक शुद्धि के विपरीत जा रहा है, तो योग असंभव हो गया। दुनिया ने योग को छोड़ दिया क्योंकि मानसिक शुद्धि के बिना शारीरिक शुद्धि हो नहीं सकती और मानसिक शुद्धि लगातार अशुद्धि की तरफ जा रही है। ऐसी स्थिति में बाबा रामदेव ने सरल योग का प्रस्ताव दिया, जो मानसिक शुद्धि पर बाद में और शारीरिक शुद्धि को पहले शुरू करता है। इसीलिए इसे सरल योग का नाम दिया गया और यह योग भारत सहित पूरी दुनिया में प्रचलित हो गया। यह अच्छा हुआ या बुरा, यह एक अलग बात है, लेकिन यह योग का सरलीकरण हुआ। अब हर आदमी शारीरिक शुद्धि को ही योग मानकर चल रहा है, जबकि योग में मानसिक शुद्धि की भी अनिवार्यता है। हम नई समाज व्यवस्था में मानसिक शुद्धि और शारीरिक शुद्धि दोनों को एक साथ महत्व देंगे, एक बराबर महत्व देंगे। हम लगातार यह प्रयत्न कर रहे हैं कि हम मानसिक शुद्धि में आने वाली हर प्रकार की बाधा को दूर करें।

भारत की संवैधानिक प्रणाली में वकीलों की भूमिका

मैं लंबे समय से यह समझता रहा हूं कि भारत की संवैधानिक प्रणाली के बिगाड़ने में बड़े-बड़े वकीलों की अधिक भूमिका रही है। इन लोगों ने संविधान बनाने में भी अपने एकाधिकार का प्रयोग किया। इन्हें समाजशास्त्र या समाज विज्ञान की कोई जानकारी नहीं है। ये तो सिर्फ कानून जानते हैं जबकि कानून और संविधान अलग-अलग होते हैं। न्यायपालिका में यदि आज इतना भारी भ्रष्टाचार बढ़ा हुआ है तो उसमें न्यायाधीशों के साथ-साथ हमारे अधिवक्ताओं की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अभी जिस न्यायाधीश के घर से इतना भ्रष्टाचार का पैसा पाया गया, उसके बचाव में भी विपक्ष के बड़े नेता कपिल सिब्बल खुलकर सामने आ गए हैं। कपिल सिब्बल उनके वकील के रूप में नहीं बल्कि एक राजनेता के रूप में अपने तर्क पेश कर रहे हैं। वकील को वकालत तक सीमित रहना चाहिए, लेकिन यदि वकालत और राजनीति दोनों को एक साथ जोड़कर चलाया जाएगा तो समाज के अंदर भ्रम पैदा होता है। कपिल सिब्बल हमेशा एक पेशेवर राजनेता माने गए हैं, यह कोई पहली बार सिद्ध नहीं हुआ है और इस भ्रष्टाचार के मामले में भी कपिल सिब्बल को वकील के रूप में ही सीमित रहना चाहिए। कपिल सिब्बल जिस तरह हमारे लोकतांत्रिक व्यवस्था का दुरुपयोग कर रहे हैं, वह अच्छी बात नहीं है।

2 कश्मीर के सबसे बड़े राजनीतिज्ञ फारूक अब्दुल्ला ने खुलकर यह बयान दिया है कि दुनिया के मुस्लिम देशों को ईरान के साथ एकजुट हो जाना चाहिए, अन्यथा अमेरिका तथा उसके साथी देश मिलकर ईरान के बाद आपका भी नंबर लगा सकते हैं। कोई भी इस्लामिक देश अपने को अमेरिका से सुरक्षित न समझे। यह आवाज ईरान ने भी कई बार लगाई है। पाकिस्तान ने भी इसी तरह का प्रयास किया है, लेकिन ईरान, पाकिस्तान या फारूक अब्दुल्ला इस बात को भूल गए हैं कि सांप्रदायिक आधार पर संगठित होना वर्तमान दुनिया में नुकसानदायक अधिक है और लाभदायक कम। यह बात जरूर है कि पिछले वर्षों में सांप्रदायिक एकजुटता का लाभ दुनिया के मुसलमानो ने उठाया, क्योंकि मुसलमान को छोड़कर अन्य कोई भी आबादी में एकजुटता नहीं थी। दूसरी ओर मुसलमानो को कम्युनिस्टों का भी साथ मिल जाता था, इसलिए मुस्लिम एकता मुसलमानो के लिए हमेशा फायदे का सौदा साबित होती थी। लेकिन अब जमाना बदल गया है। अब गैर-मुस्लिम, गैर-कम्युनिस्ट दुनिया लोकतंत्र के नाम पर एकजुट हो रही है और इस लोकतांत्रिक एकजुटता के सामने सांप्रदायिक एकता कहीं भी टिक नहीं पा रही है। आज मुस्लिम एकता जितनी कठिन होती जा रही है और इस एकता से मुसलमानो को जितना नुकसान हो रहा है, वह नुकसान उमर अब्दुल्ला तो समझ रहे हैं, लेकिन फारूक अब्दुल्ला नहीं समझ रहे हैं। क्योंकि फारूक अब्दुल्ला ने तो सिर्फ वही जमाना देखा है जब मुस्लिम एकता लाभ में रहा करती थी और अब उमर अब्दुल्ला नया जमाना भी देख रहे हैं। मैं यह चाहता हूं कि इस्लाम के नाम पर सांप्रदायिक एकजुटता इस्लाम को दुनिया से समाप्त कर देगी। फारूक अब्दुल्ला तो कुछ वर्षों में चले जाएंगे, लेकिन उमर अब्दुल्ला को अभी लंबे समय तक जीना है। इसलिए अब दुनिया के मुसलमान और खासकर भारत के मुसलमान को यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि सांप्रदायिक एकजुटता मुसलमानो के लिए घातक होगी। अब जमाना लोकतंत्र और धर्मनिरपेक्षता के साथ एकजुट होता जा रहा है।

आपातकाल की समीक्षा

"... इतिहासकार जयप्रकाश नारायण और जगमोहन लाल सिंन्हा को इस इंदिरा की तानाशाही का कारण बताने की भूल न करें। ..."

1 आपातकाल की याद में हम इंदिरा गांधी की तानाशाह प्रवृत्ति पर चर्चा कर रहे हैं। मेरा अपना अनुभव बताता है कि किसी भी प्रवृत्ति का क्लाइमेक्स अर्थात पराकाष्ठा सिर्फ महिला ही कर सकती है, पुरुष नहीं, चाहे वह पराकाष्ठा सेवा की हो अथवा अत्याचार की, चाहे वह पराकाष्ठा त्याग की हो या संग्रह की, चाहे वह प्रेम की हो या तानाशाही की। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण हमारे सामने पंडित नेहरू और इंदिरा गांधी के रूप में उपस्थित है। नेहरू के मन में तानाशाही थी लेकिन वह तानाशाही एक सीमा के अंदर थी। इंदिरा गांधी ने उन सारी सीमाओं को तोड़ दिया। सेक्स की भूख भी नेहरू के मन में थी लेकिन उसकी सीमा थी। नेहरू के मन में एक लोकलाज थी, प्रतिष्ठा की सुरक्षा का भाव था। इंदिरा गांधी के मन में किसी प्रकार की कोई सीमा नहीं थी। नेहरू किसी को भी धोखा देने में बहुत सावधान रहे थे लेकिन इंदिरा गांधी ने इस मामले में भी पराकाष्ठा से आगे बढ़ने का प्रयत्न किया। आज मैं अच्छे-अच्छे इतिहासकारों को देखता हूं, अच्छे-अच्छे नेताओं को भी देखता हूं, वे ऐसा मानते और प्रचारित करते हैं कि जगमोहन लाल सिंन्हा के निर्णय और जयप्रकाश आंदोलन के बाद इंदिरा गांधी के अंदर आपातकाल और तानाशाही की भूख जागी। मेरे विचार से यह हम लोगों की एक बड़ी नासमझी है। इंदिरा गांधी शुरू से ही लोकलाज छोड़कर तानाशाह बन रही थीं। इंदिरा गांधी ने पूर्ण बहुमत प्राप्त होने के बाद संविधान में मनमाने संशोधन किए। इंदिरा गांधी ने व्यक्ति के मौलिक अधिकार भी छीन लिए। इंदिरा गांधी ने राष्ट्रपति के भी अधिकार छीन लिए। यह सब जगमोहन लाल के निर्णय के पहले हुआ। स्पष्ट है कि इंदिरा गांधी पूर्ण तानाशाह बनने के लिए किस अवसर की प्रतीक्षा कर रही थीं। मुझे अच्छी तरह पता है कि राजीव गांधी इंदिरा गांधी से सहमत नहीं थे और संजय गांधी पूरी तरह इंदिरा के साथ थे, इसलिए संजय गांधी को सारी गुंडागर्दी के अधिकार दिए गए थे। दुर्भाग्य है कि हमारे संघ के लोग संजय गांधी की गुंडागर्दी की आज तक प्रशंसा करते हैं। कोई भी इतिहासकार या विचारक इस बात का उत्तर क्यों नहीं देता कि व्यक्ति के मौलिक अधिकार और राष्ट्रपति के अधिकार छीनने की उस समय क्या आवश्यकता थी, क्या मजबूरी थी। यही नहीं, केशवानंद भारती का निर्णय जिस दिन न्यायालय में सुनाया गया, उसी के दूसरे दिन सुप्रीम कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश को मनमाने तरीके से बदल दिया गया और राय के चहेते रे को सुप्रीम कोर्ट का मुख्य न्यायाधीश बनाया गया। क्योंकि जस्टिस रे के नेतृत्व में तीन अन्य न्यायाधीशों ने केशवानंद भारती प्रकरण में इंदिरा गांधी की बात मान ली थी और इन्हीं चारों न्यायाधीशों ने आपातकाल के बाद फिर से इंदिरा गांधी का समर्थन किया। इसका मतलब स्पष्ट है कि इंदिरा गांधी की शुरुआत से ही पूरी तैयारी थी। मेरा यह सुझाव है कि हमारे इतिहासकार जयप्रकाश नारायण और जगमोहन लाल सिंन्हा को इस इंदिरा की तानाशाही का कारण बताने की भूल न करें। सच्चाई है कि भारत में तानाशाही स्थापित करने की जो ढकी छुपी योजना नेहरू के मन में थी और नेहरू जी योजना पर काम कर रहे थे, उस योजना को बहुत तेज गति से पराकाष्ठा तक पहुंचाने में इंदिरा गांधी ने अपनी भूमिका निभाई और आज भी सोनिया गांधी निरंतर इस तरह का प्रयत्न कर रही हैं, जिनकी प्रति छाया वर्तमान में राहुल गांधी पर दिखाई दे रही है।

2 कल मैंने इंदिरा गांधी पर एक पोस्ट लिखी थी। कई लोगों के विचार भी आए, प्रश्न भी आए। मैंने अपने लेख में महिलाओं के बुरे पक्ष को ही नहीं, अच्छे पक्ष को भी स्वीकार किया है, अर्थात परिवार के लिए जान देने की जरूरत हो, सबसे आगे महिलाएं आती हैं। इसका अर्थ यह नहीं है कि महिलाएं सिर्फ अच्छे कार्यों में ही आगे रहती हैं, बुरे कार्यों में भी महिलाओं की भागीदारी उतनी ही हो सकती है जितनी अच्छे कार्यों में। इसका एक जीता जागता उदाहरण इंदिरा गांधी हैं। स्वतंत्रता के बाद इंदिरा गांधी में पांच महत्वपूर्ण ऐसी योग्यताएं दिखाई दीं, जिस मामले में उन्होंने राजनीति की सारी सीमाओं को तोड़ दिया। वह हैं धूर्तता, नाटकबाजी, भावनाहीनता, दुसाहसी और तिकड़मी। आप बताइए, इन पांच मामलों में भारत का कौन सा ऐसा अन्य नेता हुआ है जो इन पांचों को मिलाकर एक साथ इंदिरा गांधी से आगे निकला हो। मेरे विचार से महिला के रूप में हमारे पास इंदिरा गांधी रही हैं और पुरुषों के रूप में प्रधानमंत्री नेहरू, लाल बहादुर शास्त्री, नरसिंह राव, चंद्रशेखर, राजीव गांधी, मनमोहन सिंह, नरेंद्र मोदी, कुछ अन्य लोगों को मिलाकर करीब 10 लोग पुरुष प्रधानमंत्री बने हैं और एक महिला। लेकिन इंदिरा गांधी ने जो पांचों मामलों में सीमाएं तोड़ी हैं, वह कोई साधारण बात नहीं है। हमारे किसी पाठक ने यह उत्तर नहीं दिया कि इंदिरा गांधी ने कितनी सफाई से इस बात का नाटक किया कि वह त्यागपत्र देना चाहती थीं या चुनाव हारने के बाद हिमालय में जाना चाहती थीं। क्या इस तरह का नाटक किसी अन्य राजनेता ने किया है? मैंने जो पांच योग्यताएं बताई हैं, आप बताइए कि इन पांचों में से किस योग्यता पर आपको संदेह है। कुछ मामलों में इंदिरा गांधी का रिकॉर्ड

सोनिया गांधी ने ही तोड़ा है। कितनी सफाई से अपने अध्यक्ष सीताराम केसरी को भरी बैठक में उठाकर बाहर फेंकवा दिया गया, कितनी सफाई से 10 साल तक मनमोहन सिंह को कठपुतली बनाकर नचाया गया। इतनी सफाई से अभी तक कोई अन्य राजनेता काम नहीं कर सका है। इसलिए मैं यह कह सकता हूं कि मैंने जो कल लिखा है, मेरे विचार से बिल्कुल ठीक है।

3 भारत में दो राजनीतिक ग्रुप बने हुए हैं, एक को एनडीए और दूसरे को यूपीए कहते हैं। एनडीए के लोग इंदिरा गांधी के समय के आपातकाल की पूरी आलोचना करते हैं और यूपीए के लोग नरेंद्र मोदी के 11 वर्षों के शासन को अघोषित आपातकाल बताते हैं। मैंने भी इन दोनों की विवेचना की है। मेरे विचार से दोनों ही बातों में कुछ दम है। पंडित नेहरू के कार्यकाल से लेकर 45 वर्षों तक भारत में आपातकाल रहा, लेकिन यह आपातकाल 75 के दो वर्षों को छोड़कर बाकी पूरे समय में अघोषित आपातकाल था। क्योंकि अघोषित आपातकाल में संविधान गुलाम होता है और न्यायपालिका अघोषित गुलाम होती है, जबकि घोषित आपातकाल में न्यायपालिका भी संविधान की तरह घोषित गुलाम हो जाती है। फिर भी मेरा यह मानना है कि सुशासन के लिए आपातकाल जरूरी होता है। इस तरह सुशासन के लिए आपातकाल एक मार्ग है, लेकिन वह मार्ग अच्छी नीयत से होना चाहिए, बुरी नीयत से नहीं। यदि हम विपक्ष की बात को सच मान लें कि वर्तमान समय में भी अघोषित आपातकाल है, तो हमें इस बात का परीक्षण करना पड़ेगा कि नेहरू से लेकर 91 तक का आपातकाल किसी अच्छी नीयत से था या बुरी नीयत से और वर्तमान के आपातकाल में नीयत क्या है। वास्तविक लोकतंत्र में न्यायपालिका बहुत शक्तिशाली होती है। बिना न्यायिक प्रक्रिया के किसी अपराधी को दंड नहीं दिया जा सकता। लेकिन अघोषित आपातकाल में इस प्रकार के अपराधियों को दंड दिया जा सकता है, जैसा उत्तर प्रदेश में अपराधियों के साथ हो रहा है, जैसा छत्तीसगढ़ में नक्सलवादियों के साथ हो रहा है, जैसा कश्मीर में आतंकवादियों के साथ हो रहा है। इसलिए हम यह कह सकते हैं कि वर्तमान परिस्थितियों में बुरी नीयत से आपातकाल नहीं, अच्छी नीयत से आपातकाल की दिशा में जा रही हैं और पहले की राजनीतिक स्थिति बुरी नीयत से आपातकाल का उपयोग कर रही थी। इसलिए गंभीर प्रश्न यह नहीं है कि आपातकाल अच्छा या बुरा है, गंभीर प्रश्न है कि आपातकाल का उपयोग अच्छी नीयत से किया जा रहा है या बुरी नीयत से। वैसे कुल मिलाकर किसी भी परिस्थिति में आपातकाल का उपयोग अच्छी बात नहीं है। हमें पूरी तरह आपातकाल मुक्त सामाजिक व्यवस्था में आगे बढ़ना चाहिए, लेकिन यदि बुरी नीयत से दुष्ट प्रवृत्ति के लोग आपातकाल का दुरुपयोग कर रहे हैं और उसका समाधान लोकतंत्र में नहीं है, तो फिर मोदी का आपातकाल क्या बुरा है।

"... प्रश्न यह नहीं है कि आपातकाल अच्छा या बुरा है, गंभीर प्रश्न है कि आपातकाल का उपयोग अच्छी नीयत से किया जा रहा है या बुरी नीयत से।..."

4 आज रायपुर शहर में छत्तीसगढ़ के मुख्यमंत्री जी ने हम लोगों को आमंत्रित करके सम्मानित किया। जिन लोगों ने आपातकाल में 18 महीने की जेल यात्रा की थी और कष्ट झेले थे, उनमें से जो लोग जीवित हैं, उन जीवित लोगों में मैं भी शामिल हूं। तो मुझे मुख्यमंत्री जी ने इस कार्य के लिए आज सम्मानित किया। जो लोग जीवित नहीं हैं, यदि उनकी पत्नी जीवित है, तो उन्हें भी सम्मान में आमंत्रित किया गया था। मैं स्पष्ट कर दूं कि मैं 18 महीने इंदिरा जी की जेल में रहा था। अब हमारी छत्तीसगढ़ सरकार इस प्रकार के मीशाबंदियों को स्वतंत्रता रक्षक सेनानी मानती है और उन्हें ₹25000 प्रति माह भत्ता भी देती है। यह राशि मुझे भी मिलती रही है।

5 सारी दुनिया में धीरे-धीरे मुसलमानो के अंदर यह विचार बढ़ रहा है कि इस्लाम खतरे में है। भारत के मुसलमान में तो यह धारणा आमतौर पर स्थापित हो गई है। मैं भी देख रहा हूं कि चाहे सारी दुनिया की स्थिति जो हो, लेकिन भारत में तो इस्लाम खतरे में दिख रहा है क्योंकि इस्लाम यह साफ मानता है कि या तो हम पूरी दुनिया को मुसलमान बनाएंगे या समाप्त हो जाएंगे। भारत का मुसलमान भी लगातार इसी दिशा में आगे बढ़ता रहा। 70 वर्षों तक पूरे भारत में मुसलमान के अंदर यह धारणा बन गई थी कि मुसलमान जिसे चाहेगा, वहीं सरकार बनाएगी। यह बात आपातकाल के समय और अधिक सिद्ध हुई क्योंकि इंदिरा गांधी का पतन मुसलमानो की सक्रियता से ही हुआ था। यदि मुसलमान उस समय इंदिरा का साथ देता, तो इंदिरा नहीं जाती, लेकिन सन 80 में हमारे कुछ भाजपा नेताओं की गलती के कारण सरकार गिर गई। मुसलमानो को यह विश्वास हो गया कि हमारी सुरक्षा इंदिरा ही कर सकती है और इसलिए उसने इंदिरा का साथ दे दिया। 3 वर्ष में ही फिर से इंदिरा गांधी स्थापित हो गई। लेकिन अब मुसलमानो के मन में यह बात साफ होती जा रही है कि वर्तमान भारत में यदि मुसलमान सांप्रदायिक आधार पर एकजुट होकर किसी दल को वोट देता है, तो वह दल निश्चित रूप से चुनाव हारेगा ही। इसलिए अभी मुसलमान इस असमंजस में है कि भारत को छोड़कर कहीं विदेश में जाने की स्थिति नहीं है और यदि भारत में ही रहना है, तो उसे समानता के आधार पर ही रहना पड़ेगा। बेचारा मुसलमान इस बात को तय नहीं कर पा रहा है कि उसे क्या करना चाहिए।

6 पिछले कुछ दिनों से संविधान और आपातकाल के अंतर संबंधों पर फिर से विचार करने की बात शुरू हुई है। संघ के प्रमुख होशबोले जी ने इस विचार से शुरुआत की है कि आपातकाल में संविधान में धर्मनिरपेक्षता और समाजवाद को प्रिंसिपल में जोड़े जाने पर नई संसद को फिर से विचार करना चाहिए। एक ओर जहां सत्ता पक्ष धीरे-धीरे इस बात के समर्थन में आ रहा है, दूसरी ओर नेहरू परिवार के नेतृत्व में विपक्ष इस बात के विरोध में डटकर खड़ा हो गया है। मैं अपनी चर्चा का प्रारंभ एक काल्पनिक कहानी से करता हूं, जिसमें एक राजा ने एक खूबसूरत महिला और उसके पति को अकारण जेल में अलग-अलग कमरों में बंद कर दिया और पहरा लगा दिया। 18 महीने में उस महिला को एक संतान पैदा होती है। राजा लगातार इस बात का प्रयत्न कर रहा है कि वह संतान उसके पति की ही मानी जाए, जबकि पति इस बात से अस्वीकार करता है। उस बच्चे के डीएनए की जब बात आती है, तो राजा उस परीक्षण के भी विरुद्ध खड़ा हो जाता है। बताइए, ऐसी स्थिति में समाज क्या निर्णय करें? आपातकाल में संविधान और संविधान बनाने वाली प्रक्रिया को अलग-अलग जेल में बंद कर दिया गया। संविधान में मनमाने संशोधन हुए, इन संशोधनों को संविधान का भाग माना जाए या नहीं, यही महत्वपूर्ण प्रश्न है। जो विपक्ष अंबेडकर का संविधान बताते हैं, वहीं विपक्ष यह बताने में सफल नहीं है कि क्या आपातकाल में किए गए संशोधन अंबेडकर की सहमति से हुए थे या अंबेडकर के संविधान की सहमति से हुए थे अथवा संसद की सहमति से हुए थे। अनेक संसद सदस्यों को जेल में डालकर, न्यायपालिका पर मनमाना नियंत्रण करके और संविधान को भी अपने कब्जे में लेकर उससे जो परिणाम निकला, वह परिणाम आदर्श स्थिति नहीं कही जा सकती। वह परिणाम अंबेडकर के नाम पर नहीं जोड़ा जा सकता क्योंकि आपने अंबेडकर के संविधान में संवैधानिक प्रक्रिया से कोई संशोधन नहीं किया था। इसलिए यदि यह मांग उठ रही है कि आपातकाल में किए गए संविधान संशोधनों पर संसद पुनर्विचार करें, तो मैं नहीं समझता कि इसमें गलत क्या है। अंबेडकर के नाम पर आप किसी अवैध संतान को उसकी वास्तविक संतान नहीं कह सकते, आपको डीएनए टेस्ट कराना ही होगा।

ज़ूम चर्चा कार्यक्रम का सारांश

1 दिनांक 17 6 2025 को आयोजित ज़ूम चर्चा कार्यक्रम में 'समाज और गुलामी' शीर्षक पर चर्चा हुई। शीर्षक के अंतर्गत कई पहलुओं पर विचार मंथन किया गया।

स्वतंत्रता के बाद यह देखने को मिल रहा है कि राष्ट्रवाद को समाज की अपेक्षा अधिक महत्व दिया जा रहा है। भारतीय राजव्यवस्था के द्वारा राष्ट्रवाद का नारा देकर अपना हित साधा जा रहा है। इसके ठीक उल्टा समाज को निरंतर क्षति पहुंचाई जा रही है और उसको गुलाम बनाने का प्रयास किया जा रहा है। राष्ट्रवाद का अगर हम समर्थन करते हैं तो यह कोई बुरी बात नहीं है। अपने राष्ट्र के प्रति गौरव बोध होना ही चाहिए मगर यह सामाजिक हित को दरकिनार कर नहीं। व्यक्ति समाज और परिवार के माध्यम से जब अपनी जड़ों से जुड़ता है तभी वह राष्ट्रवाद की ओर उन्मुख होता है। हमारी सांस्कृतिक, सामाजिक और धार्मिक विशेषताएं ही आगे चलकर राष्ट्रवाद का रूप ले लेती हैं। अगर समाज बिखर जाएगा या उसकी परंपरा, प्रथा और रस्म रिवाज से दूरी हो जाएगी तब राष्ट्रवाद की भावना भी अपने आप खत्म हो जाएगी। अतः सामाजिक हितों का संरक्षण भी अत्यंत आवश्यक है।

आजादी के बाद राज्य के द्वारा जातिवाद और धर्म के आगे राज्य ने बारंबार घुटने टेके हैं। अल्पसंख्यक तुष्टिकरण और आरक्षण जैसी व्यवस्था के माध्यम से राज्य हमेशा जाति और धार्मिक समूह के आगे नतमस्तक हुआ है। वहीं दूसरी ओर समाज को गुलाम बनाने के लिए तत्पर रहा है। विभिन्न प्रकार के कानून के माध्यम से परिवार और समाज के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप हमेशा रहा है।

बिखरती सामाजिक व्यवस्था का परिणाम रहा है कि समाजशास्त्री, बुद्धिजीवी और समाज के जिम्मेदार लोग प्रासंगिकता खोते जा रहे हैं। धर्मगुरु जो कभी जनमानस में नशा मुक्ति, नैतिक उत्थान और चरित्र निर्माण जैसे कार्यों में लगे रहते थे आज नजर नहीं आते। दूसरी बात यह भी है कि वे अब इस स्थिति में नहीं है कि जनमत को अपनी बात से प्रभावित कर सके। समाज के जिम्मेदार लोग अब सरकार से कानून बनाने की मांग करते हैं ताकि सामाजिक अराजकता का निवारण हो। राज्य इसी स्थिति का फायदा उठाकर समाज को अपने नियंत्रण में ले रहा है।

गुलामी और अनुशासनहीनता दोनों ही एक स्वस्थ समाज के लिए खतरनाक है। इसमें गुलामी अधिक खतरनाक है क्योंकि अनुशासनहीनता को हम विभिन्न उपायों से दूर कर सकते हैं मगर गुलामी को हटाना बहुत मुश्किल होता है। लंबे समय तक अगर कोई समाज गुलाम रहता है तो अपनी बौद्धिक, कार्यकारी और सुधारात्मक क्षमता खो देता है। आज भारतीय समाज की इसी स्थिति के चलते हमारी दुर्दशा हो गई है।

चर्चा उद्देश्य पूर्ण एवं सार्थक रही जिसमें विचारकों ने स्वतंत्रता पूर्वक अपने विचार रखे।

2 दिनांक 23 जून 2025 को आयोजित ज़ूम चर्चा कार्यक्रम में सामाजिक समस्याओं पर गंभीर विमर्श हुआ। चर्चा के दौरान समस्याओं से जुड़े विभिन्न पहलुओं पर विचार-विमर्श किया गया।

वर्तमान समय में संचालक और संचालित के मध्य दूरी अत्यधिक बढ़ गई है। दूसरे शब्दों में कहें तो न्याय और व्यवस्था, राज्य और सरकार, तथा शासक और शासित के बीच संवाद की कमी स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। आज के दौर में जनता और जनप्रतिनिधियों के बीच संवाद लगभग शून्य हो गया है। इसी प्रकार न्यायपालिका और न्याय की आकांक्षा रखने वाले नागरिकों के बीच भी अंतराल बढ़ता जा रहा है। इस प्रकार की व्यवस्था से असंतोष एवं अव्यवस्था को जन्म मिलता है।

मानव स्वभाव में "ताप वृद्धि" का तात्पर्य उसके भीतर दुर्गुणों के विस्तार से है। जब किसी व्यक्ति के भीतर लालच, असंतोष, क्रोध, अनैतिकता तथा उपभोक्तावाद जैसे अवगुण गहराई से घर कर लेते हैं, तो इस स्थिति को 'मानव ताप वृद्धि' कहा जा सकता है। हम प्रायः जलवायु परिवर्तन और वैश्विक तापन जैसी समस्याओं पर चर्चा करते हैं, किंतु उन कारणों की ओर ध्यान नहीं देते जिनसे ये समस्याएं जन्म लेती हैं। वास्तव में देखा जाए तो मानव के आंतरिक ताप की वृद्धि ही इन समस्याओं की मूल जड़ है।

आत्महत्या एक सामाजिक और नैतिक प्रश्न है, न कि आपराधिक कृत्य। सुखद तथ्य यह है कि भारतीय दंड संहिता में अब इसे अपराध की श्रेणी से बाहर कर दिया गया है। आत्महत्या प्रायः व्यक्ति द्वारा अपने जीवन की अत्यंत कष्टप्रद परिस्थितियों से त्रस्त होकर की जाती है। समाज का कर्तव्य है कि वह ऐसे व्यक्ति की परिस्थिति, भावना और विवशता को समझते हुए उसे सहयोग प्रदान करे।

सामान्यतः देखा गया है कि भावना प्रधान या मानसिक रूप से असंतुलित व्यक्ति आत्महत्या की प्रवृत्ति के शिकार अधिक होते हैं। अहंकार अथवा सामाजिक प्रतिष्ठा के प्रति अत्यधिक मोह भी इसका प्रमुख कारण हो सकता है। अतः व्यक्ति को बुद्धिप्रधान और तार्किक होने की आवश्यकता है।

समाज के समक्ष पाँच प्रकार की समस्याएँ होती हैं—वास्तविक, कृत्रिम, प्राकृतिक, भूमंडलीय तथा अस्तित्वहीन। दुर्भाग्यवश, सरकार प्रायः कृत्रिम एवं अस्तित्वहीन समस्याओं पर ही विचार करती है, जबकि वास्तविक समस्याएँ उपेक्षित रह जाती हैं। राजनीतिक स्वार्थों की पूर्ति के लिए कई बार नई समस्याओं का सृजन भी जानबूझकर किया जाता है, जिनमें महंगाई और सामाजिक असमानता जैसे विषय शामिल हैं।

कुल मिलाकर यह चर्चा अत्यंत सार्थक एवं उद्देश्यपूर्ण रही। सभी विचारकों ने निष्पक्षता और स्वतंत्रता के साथ अपने विचार प्रकट किए, जिससे संवाद की गुणवत्ता और गहराई बढ़ी।

साथियों के कलम से...

लोकतंत्र, सत्ता और साम्यवाद: भारत-अमेरिका की समान चुनौती...

:ज्ञानेन्द्र आर्य

आज अमेरिका की लोकतांत्रिक व्यवस्था एक ऐसे संकट से जूझ रही है, जिसका सामना भारत वर्षों पूर्व कर चुका है। लॉस एंजिल्स जैसे शहरों में अप्रवासी संकट के कारण अशांति, दंगे और हिंसा बढ़ते जा रहे हैं। प्रशासन इन समस्याओं को नियंत्रित करने में विफल नजर आ रहा है। चार वर्ष पूर्व एक अश्वेत नागरिक की पुलिस द्वारा हत्या से जन्मे 'ब्लैक लाइव्स मैटर' आंदोलन ने अमेरिका को सामाजिक और राजनीतिक रूप से हिला दिया था। इस आंदोलन ने सत्ता परिवर्तन की भूमिका भी निभाई।

डेमोक्रेटिक पार्टी की वामपंथी नीतियाँ आज अमेरिका को सामाजिक अस्थिरता की ओर धकेल रही हैं। आर्थिक समृद्धि का केंद्र होने के कारण अमेरिका में वैध-अवैध तरीकों से अप्रवासियों का आगमन होता रहा है। इसी मुद्दे पर ट्रम्प जैसे नेताओं को जनता का समर्थन मिला। किंतु डेमोक्रेट्स अप्रवासन जैसे जटिल विषयों पर जनमत से टकराने से बचते हुए भावनात्मक और जातीय-सांस्कृतिक मुद्दों के सहारे सत्ता में आते रहे हैं।

यह रणनीति भारत में पहले ही देखी जा चुकी है। नेहरू के बाद कांग्रेस ने मुस्लिम तुष्टिकरण, जातिवादी राजनीति, और संवैधानिक संस्थाओं के दुरुपयोग जैसे उपायों से सत्ता को साधा। राष्ट्रहित की जगह भावनात्मक मुद्दों को प्राथमिकता दी गई। नतीजतन, कांग्रेस की राजनीति एक 'चक्रव्यूह' बन गई, जिसमें अभिमन्यु समान राष्ट्रवादी प्रयास, वामपंथी इतिहासकारों, सरकारी साहित्यकारों, मीडिया, नौकरशाही और न्यायपालिका के गठजोड़ से परास्त हुए। इस गठजोड़ ने समाज की समझ (कृष्ण) और हितों (अर्जुन) को नेपथ्य में डालकर सत्ता के षड्यंत्रों को प्राथमिकता दी।

भारत में 2014 में सत्ता परिवर्तन भले ही भाजपा के नेतृत्व में हुआ, पर वह भी सीधे राष्ट्रहित के मुद्दे पर नहीं था। 2009 के बाद कांग्रेस सरकार पर वामपंथी विचारकों का कब्ज़ा हो चुका था। मनमोहन सिंह को साम्यवादियों की कठपुतली बनाकर सोनिया गांधी ने सरकार को नियंत्रित किया। उनकी योजना राहुल गांधी को सत्ता सौंपने की थी, जिसके लिए उन्होंने भ्रष्टाचार के मुद्दे खुद ही प्रचारित करवाए। किंतु मनमोहन सिंह ने इसलिए कुर्सी नहीं छोड़ी कि सोनिया गांधी खुद सीधे कहें।

इस सत्ता संघर्ष में बाबा रामदेव, अन्ना हजारे और भाजपा ने भ्रष्टाचार के खिलाफ जनमत को संगठित किया। इस जनलहर ने नरेंद्र मोदी को सत्ता तक पहुँचाया। यह स्पष्ट करता है कि लोकतांत्रिक व्यवस्था में सत्ता और विचारधारा का संघर्ष केवल मतदान का नहीं, बल्कि विचारों, मूल्यों और राष्ट्रहित के लिए लड़ाई का मैदान बन जाता है—चाहे वह भारत हो या अमेरिका।

स्वराज यात्रा का वृतांत....

स्वराज यात्राः समीक्षा

प्रवासी : ज्ञानेंद्र आर्य, मोहन गुप्ता, राजपाल मिश्रा

स्वराज यात्रा मां संस्थान और ज्ञान यज्ञ परिवार के तत्वावधान में शुरू की गई एक वैचारिक और सामाजिक पहल है, जिसका उद्देश्य ग्राम और वार्ड स्तर पर ज्ञान केंद्रों की स्थापना के माध्यम से समाज सशक्तिकरण, वर्ग समन्वय, और व्यवस्था परिवर्तन को बढ़ावा देना है। यह यात्रा 2 जुलाई 2025 को रामानुजगंज से प्रारंभ हुई और इसके पांच पड़ावों—अदारी (मऊ), गोरखपुर, दरियाबाद (मधुवन तहसील, मऊ), मोहम्मदाबाद (गाजीपुर), और नागेपुर (बनारस)—में विभिन्न गतिविधियों और बैठकों के माध्यम से अपने उद्देश्यों को साकार करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाए गए। सुप्रसिद्ध मौलिक विचारक बजरंग मुनि जी की प्रेरणा से शुरू हुई यह यात्रा ग्राम सभाओं को संवैधानिक अधिकारों के प्रति जागरूक करने, सामाजिक सौहार्द को बढ़ावा देने, और वैचारिक परिवर्तन की आधारशिला रखने का प्रयास है।

यात्रा का अवलोकन

स्वराज यात्रा का मूल उद्देश्य ज्ञान केंद्र योजना को जन-जन तक पहुंचाना है, जो तीन आयामों पर केंद्रित है:

1. संवैधानिक व्यवस्था परिवर्तन : ग्राम सभाओं को संविधान के 73वें संशोधन के तहत प्राप्त 29 विधाई अधिकारों को लागू करना और संविधान संशोधन में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका सुनिश्चित करना।

2. समाज सशक्तिकरण : परिवारिक ढांचे को मजबूत करना।

3. वैचारिक परिवर्तन : विपरीत विचारधारा वाले व्यक्तियों के साथ निश्चित विषय पर विचार-मंथन

यात्रा का नेतृत्व ज्ञानेंद्र आर्य , मोहन गुप्ता, और राजपाल मिश्रा ने किया। प्रत्येक पड़ाव पर स्थानीय समितियों का गठन, विचार-विमर्श, और ज्ञान केंद्रों की स्थापना इस यात्रा की मुख्य उपलब्धियां रहीं। सभी स्थानों पर 12-16 फरवरी 2026 को रामानुजगंज में आयोजित होने वाले ज्ञानोत्सव के लिए निमंत्रण दिया गया।

पड़ाव-दर-पड़ाव समीक्षा

1. प्रथम पड़ाव: अदारी नगर पंचायत, मऊ (2 जुलाई 2025)
- स्थान : शिव मंदिर, अदारी
- मुख्य आयोजक : श्री निरंजन विश्वकर्मा
- विशेषताएं : - आचार्य सुनील देव शास्त्री जी की प्रस्तावित भागवत कथा स्थगित होने के बावजूद, निरंजन विश्वकर्मा ने स्वागत और बैठक आयोजित की।
- वर्षा के बावजूद 25 ग्रामवासियों की उपस्थिति।
- बजरंग मुनि जी के विचारों और ज्ञान केंद्र योजना पर चर्चा।
- उपलब्धि : 11 सदस्यीय ज्ञान केंद्र समिति का गठन, प्रमुख: निरंजन विश्वकर्मा ।
- महत्व : प्रथम पड़ाव पर ज्ञान केंद्र की स्थापना और स्थानीय उत्साह ने यात्रा की सफल शुरुआत की।

2. दूसरा पड़ाव: गोरखपुर (3 जुलाई 2025)
- मुख्य आयोजक : राजपाल मिश्रा, अध्यक्षता: शैलेंद्र दुबे
- विशेषताएं : - 30+ कार्यकर्ताओं की उपस्थिति (राकेश शर्मा, राजेंद्र राय, राजीव जी)।
- गोरखपुर जिला ज्ञान केंद्र समिति और क्षेत्रीय समन्वय समिति का गठन।
- ज्ञानोत्सव के लिए निमंत्रण।
- उपलब्धि : ज्ञान केन्द्र समिति के प्रमुख दिनेश शर्मा समन्वय समिति के प्रमुख राकेश राय।
- महत्व : क्षेत्रीय स्तर पर योजना के प्रसार के लिए मजबूत आधार तैयार।

3. तीसरा पड़ाव: दरियाबाद, मधुवन तहसील, मऊ (4 जुलाई 2025)
- स्थान : ग्राम प्रधान विक्रमा मौर्या का आवास।
- मुख्य आयोजक : अनोखेलाल (संचालन), राम अवध मौर्य (अध्यक्षता)
- विशेषताएं : - 20+ लोग उपस्थित, जिसमें शिव शंकर उपाध्याय, राम आज्ञा राजभर शामिल।
- दरियाबाद में ज्ञान केंद्र की स्थापना, प्रमुख: विक्रमा मौर्या ।
- ज्ञानोत्सव के लिए निमंत्रण।
- महत्व : क्षेत्र की क्रांतिकारी परंपराओं ने वैचारिक जागरण को बल दिया।

4. चौथा पड़ाव: मोहम्मदाबाद, गाजीपुर (5 जुलाई 2025)
- मुख्य आयोजक : जितेंद्र चौरसिया, मनोज गुप्ता, प्रेमनाथ गुप्ता (संचालन)
- विशेषताएं : - 40+ लोगों की उपस्थिति (गुलाब चन्द राजभर, अवधेश सिंह कुशवाहा)।
- प्रमुख: रामजी गिरी ।
- स्वराज की चुनौतियों और समाधानों पर चर्चा।
- महत्व : विभिन्न संगठनों की सहमति ने यात्रा को व्यापक समर्थन दिलाया।

5. पांचवां पड़ाव: नागेपुर, बनारस (6 जुलाई 2025)
- स्थान : लोक समिति आश्रम
- मुख्य आयोजक : नंदलाल मास्टर (संचालन)
- विशेषताएं : - 40+ महिलाएं और पुरुष उपस्थित, जिसमें ग्राम प्रधान और कार्यकर्ता शामिल।
- ज्ञानोत्सव के लिए निमंत्रण।
- महत्व : महिलाओं की भागीदारी और ग्राम सभाओं का सशक्तिकरण इस पड़ाव की विशेषता।

प्रमुख उपलब्धियां

1. ज्ञान केंद्रों की स्थापना :
- अदारी : प्रमुख: निरंजन विश्वकर्मा
- दरियाबाद : प्रमुख: विक्रमा मौर्या
- मोहम्मदाबाद : प्रमुख: रामजी गिरी
- गोरखपुर में समन्वय समिति गठित, नागेपुर में

सामुदायिक जागरूकता।
- बजरंग मुनि जी के विचारों और संवैधानिक अधिकारों पर चर्चा।
- सभी स्थानों पर 12-16 फरवरी 2026 को रामानुजगंज में ज्ञानोत्सव के लिए निमंत्रण।

3. सामाजिक समन्वय :
- महिलाओं और पुरुषों की समान भागीदारी, विशेष रूप से नागेपुर में।
- विभिन्न संगठनों का समर्थन।

4. आगामी योजनाएं :
- मां संस्थान द्वारा मध्य और पश्चिमी भारत में ज्ञान केंद्र योजना का प्रसार।

विश्लेषण और प्रभाव

स्वराज यात्रा ने ग्रामीण भारत में वैचारिक और सामाजिक परिवर्तन की नींव रखी। स्थानीय नेतृत्व का उदय, समितियों का गठन, और सामाजिक समावेशिता इसकी सफलता के प्रमुख संकेतक हैं। बजरंग मुनि जी के विचारों ने ग्राम सभाओं को सशक्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

मजबूत पक्ष :
- स्थानीय नेतृत्व का विकास।
- सामाज सौहार्द और समावेशिता।
- संवैधानिक और वैचारिक जागरूकता।

चुनौतियां :
- दीर्घकालिक निरंतरता के लिए संसाधन और प्रशिक्षण की आवश्यकता।
- प्रारंभिक पड़ाव में भागवत कथा का स्थगित होना।

निष्कर्ष

स्वराज यात्रा ने अपने पांच पड़ावों में ज्ञान केंद्रों की स्थापना और ग्राम सभाओं के सशक्तिकरण की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाए। यह यात्रा बजरंग मुनि जी के विचारों को जन-जन तक पहुंचाने और वैचारिक क्रांति की शुरुआत करने में सफल रही। ज्ञानोत्सव और मां संस्थान की योजनाएं इसे और व्यापक बनाएंगी। यह यात्रा विचार, समन्वय, और परिवर्तन का तीर्थ बनने की दिशा में अग्रसर है।

सुझाव :
1. ज्ञान केंद्रों में नियमित प्रशिक्षण और जागरूकता कार्यक्रम।
2. डिजिटल माध्यमों से योजना का प्रसार।
3. ग्राम सभाओं के साथ स्थानीय समस्याओं के समाधान हेतु कार्ययोजनाएं।

संपर्क :
- ज्ञानेंद्र आर्य: 8318621282

गतांक से आगे ...

जीवन पथ

आदित्य मैं एक विषय पर तुझसे चर्चा करना चाहता हूँ। ....कुछ देर चुप रहने के बाद विवेक आदित्य से कहता है।

किस विषय पर! ....वह पूछता है।

समाज में स्थापित राजनीतिक व्यवस्था के ढाँचे के बारे में, मैं इस विषय में कुछ विचारों को तुम लोगों के सामने रखना चाहता हूँ। उनसे जैसे तथ्य प्राप्त होगें, हम भविष्य की वैसी योजना बनाऐगें।

क्या सोचा है तूने इस बारे में?

भारत में स्थापित राजनीतिक व्यवस्था का ढाँचा बिल्कुल गलत है।

क्यों? ....वह पुनः प्रश्न करता है।

क्योंकि सत्ताधीशों ने समाज में राजनीति की गलत परिभाषा स्थापित कर दी है। परिणाम स्वरूप समाज में यह बखेड़ा खड़ा हो गया है।

मैं तेरी बात कुछ समझ नहीं पा रहा हूँ। क्या तू समाज में राजनीति को व्यवस्था की स्थापनाकर्ता नहीं मानता है?

बस तेरी-मेरी सोच में यही थोड़ासा अन्तर है। मेरे विचार से राजनीति का अर्थ यह होता है कि समाज में व्यवस्था की स्थापना का कारण नहीं अपितु इसके क्रियान्वयन का माध्यम राजनीतिक व्यवस्था कहलाती है।

और व्यवस्था की स्थापना का कारण क्या है?

स्वयं समाज! ....समाज अपनी अन्तः प्रकृति से अपने जीवन चक्र को सुगम बनाए रखने के लिए राजनीति के माध्यम से व्यवस्था की स्थापना करता है।

क्या तेरे विचार से राज्य और समाज अलग-अलग इकाई होते हैं विवेक?

हाँ ये तो बिल्कुल अलग होते है। समाज मूल है। सम्प्रभुता का स्रोत है और राज्य इसके प्रबन्ध का अंग होता है। इसका सेवक होता है।

तब तो राष्ट्रों की निजता पर भी प्रश्न उठ जाएगा मेरे भाई!

क्या समाज का मूलभूत स्वरूप राष्ट्र की निजता के नाम पर उपेक्षित रहना चाहिए आदित्य? वैसे भी यह द्वन्द राजनीति और समाज के बीच है। राष्ट्रों की निजता की रक्षा के नाम पर उनकी परिधि में रहने वाले समाज को यदि गुलाम बना कर रखा जाएगा तो क्या इसे न्याय संगत कहा जा सकेगा?

लेकिन इस परिस्थिति मे मैं यह प्रश्न करूँगा कि क्या राज्य बाहरी खतरों से सुरक्षा के विषय में भी स्वेच्छाचारी नहीं हो सकता है?

लेकिन मूल प्रश्न यह नहीं है आदित्य! बल्कि यह है कि क्या समाज का वह अंग अपने अस्तित्व को सुरक्षित रखना चाहता है जिसके अस्तित्व की सुरक्षा के लिए या जिसके नाम पर राज्य स्वयं को स्वेच्छाचारी बनाना चाहता है!

माना कि राज्य निरंकुश नहीं होना चाहिए लेकिन समाज को भी तो व्यवस्था तन्त्र के कई निर्णयों को अपने लिए अंकुश के रूप में स्वीकार नहीं करना चाहिए। क्योंकि व्यवस्था के सन्दर्भ में प्रबन्ध शब्द का तात्पर्य अंकुश नहीं होता है बल्कि विधि और अनुशासन होता है।

लेकिन राजनीति स्वयं को समाज का प्रबन्धक स्वीकार करे तो मुझे नीतिगत रूप से इस विषय को स्वीकार करने में कोई हर्ज नहीं होगा किन्तु वह तो स्वयं को सदैव से ही व्यवस्था के नियोजक के रूप में स्वीकार करती आयी है और कर रही है।

ऐसा नहीं होने पर समाज में व्यवस्था का नियोजन कौन करेगा?

क्रमशः ...